सवाल व जवाब की शक्ल में ज़कात के तफ़सीली मसाइल का अनमोल ख़ज़ाना

ज़कात के मसाइल

एतिकाफ़ का बयान

लेखक
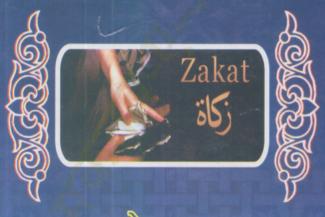
मौलाना मुफ्ती मुहम्मद यूसुफ़ लुधियानवी रह०

सवाल व जवाब की शक्ल में ज़कात के तफ़सीली मसाईल का अनमोल ख़ज़ाना

ज़कात के मसाईल

★ एतिकाफ़ का बयान ★

लेखक

मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद यूसुफ़ लुधियानवी रह०

हिन्दी अनुवादक मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

2158, एम. पी. स्ट्रीट, पटौदी हाऊस, दरिया गंज

नई दिल्ली-110002

☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆

नाम किताब	ज़कात और एतिकाफ़ के मसाईल
लेखक	मौलाना मुहम्मद यूसुफ़ लुधियानवी
हिन्दी अनुवादक	मुहम्मद इमरान क़ासमी
संयोजक	मुहम्मद नासिर ख़ान
तायदाद	1100
प्रकाशन वर्ष	सितम्बर 2008
कम्पोज़िंग	इमरान कम्प्यूटर्स मुज़फ़्फ़र नगर (09456095608)

>>>>>>>>>>>>

प्रकाशक

फरीद बुक डिपो (प्रा०) लि०

2158, एम. पी. स्ट्रीट, पटौदी हाऊस, दरिया गंज, नई देहली-110002

फ़ोन आफ़िस, 23289786, 23289159 आवास, 23280786

फ़ेहरिस्त उनवानात

उनवान	पेज

ज़कात के मसाईल

ज़कात किस पर फ़र्ज़ है?

उनवान	पेज

ज़कात का निसाब और शर्तें

ज़कात अदा करने का तरीक़ा

उनवान	पेज

उनवान	पेज

नफ़्ली सदक़ात

ज़कात के मसाईल

ज़कात दौलत की तक़सीम का इन्क़िलाबी निज़ाम

सवालः ज़कात से अ़वाम के क्या फ़ायदे हैं? यह भी एक क़िस्म का टैक्स है, जिसको आ़म लोगों के फ़ायदे पर ख़र्च करना चाहिए। इस विषय पर तफ़सील से रोशनी डालिये।

जवाबः मैं आपके मुख़्तसर सवाल को पाँच उनवानों पर तक़सीम करता हूँ। ज़कात की फ़र्ज़ियत, ज़कात के फ़ायदे, ज़कात टैक्स नहीं बल्कि इबादत है, ज़कात के ज़रूरी मसाईल और ज़कात के मसारिफ़।

ज़कात की फ़र्ज़ियत

ज़कात इस्लाम का एक अहम रुक्न है, क़ुरआन करीम में इसकी बार-बार ताकीद की गई है और नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इरशाद में भी इसकी अहमियत व इफ़ादियत और इसके अदा न करने के वबाल को बहुत ही नुमायाँ किया गया है। क़ुरआन करीम में हैः

وَالَّذِيْنَ يَكْنِزُوْنَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَا يُنْفِقُوْنَهَا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ○ يَوْمَ يُحْمٰى عَلَيْهَا فِيْ نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوٰى بِهَا

جِبَاهُهُمْ وَجُنُوبُهُمْ وَظُهُورُهُمْ هٰذَا مَا كَنَزْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ فَذُوقُوا مَا كُنْتُمْ تَكْنِزُوْنَ ۝

तर्जुमाः जो लोग सोने और चाँदी का ज़ख़ीरा जमा करते हैं और उसे अल्लाह के रास्ते में ख़र्च नहीं करते, उन्हें दर्दनाक अ़ज़ाब की ख़ुशख़बरी सुना दो, जिस दिन उन सोने चाँदी के ख़ज़ानों को जहन्नम की आग में तपा कर उनके चेहरों, उनकी पुश्तों और उनके पहलुओं (करवटों) को दाग़ा जाएगा और उनसे कहा जाएगा कि यह था तुम्हारा माल जो तुमने अपने लिए जमा किया था, पस अपने जमा किए की सज़ा चखो।

(सूरः तौबा आयत 34-35)

हदीस में इरशाद हैः

قال عبد الله قال رسول الله صلى الله عليه وسلم بنى الا سلام على خمس شهادة ان لااله الاالله وان محمدا عبده ورسوله واقام الصلوة و ايتاء الزكوة وحج البيت وصوم رمضان.

इस्लाम की बुनियाद पाँच चीज़ों पर हैः

1. इस बात की गवाही देना कि अल्लाह तआ़ला के सिवा कोई माबूद नहीं और यह कि मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उसके बन्दे और रसूल हैं।

2. नमाज़ क़ायम करना।

3. ज़कात अदा करना।

4. बैतुल्लाह का हज करना।

5. रमज़ान मुबारक के रोज़े रखना। (बुख़ारी, मुस्लिम 32-1)

एक और हदीस में है कि जिस शख़्स ने अपने माल की

ज़कात अदा कर दी उसने उसके शर (बुराई) को दूर कर दिया। (कन्जुल्ल-उम्माल हदीस 15778, मज्मउज़्ज़वाईद 3-63)

एक और हदीस में है कि जब तुमने अपने माल की ज़कात अदा कर दी तो तुम पर जो ज़िम्मेदारी आ़यद होती थी उससे तुम बरी हो गए। (तिर्मिज़ी 78-1, इब्ने माजा पेज 128)

एक और हदीस में है कि अपने मालों को ज़कात के ज़रिये महफ़ूज़ (सुरक्षित) करो, अपने बीमारों का सदक़े से इलाज करो और मुसीबतों के तूफ़ानों का दुआ़ और अल्लाह के सामने गिड़गिड़ाने से मुक़बला करो। (अबू दाऊद)

एक और हदीस में है कि जो शख़्स अपने माल की ज़कात अदा नहीं करता क़ियामत में उसका माल गंजे साँप की शक्ल में आएगा और उसकी गर्दन से लिपट कर गले का तौक़ बन जाएगा।

(सुनन नसई पेज 333 जिल्द 1, सुनन इब्ने माजा पेज 128)

इस मज़मून की बहुत से हदीसें हैं जिनमें ज़कात न देने पर क़ियामत के दिन हौलनाक सज़ाओं की वईदें सुनाई गई हैं।

ज़कात के फ़ायदे

हक़ तआ़ला शानुहू ने जितने अहकाम बन्दों के लिए मुक़र्रर फ़रमाए हैं उनमें बेशुमार हिक्मतें हैं जिनका इनसानी अ़क्ल इहाता नहीं कर सकती। चुनाँचे अल्लाह तआ़ला ने ज़कात का फ़रीज़ा आ़यद करने में भी बहुत सी हिक्मतें रखी हैं, और सच्ची बात यह है कि यह निज़ाम ऐसा पाकीज़ा व पवित्र और इतना आला व ऊँचा है कि इनसानी अ़क्ल इसकी

बुलन्दियों तक पहुँच हासिल करने से क़ासिर है, यहाँ चन्द आ़म-फ़हम फ़ायदों की तरफ़ इशारा करना चाहता हूँ।

1. आज पूरी दुनिया में समाजियात की बात हो रही है, जिसमें ग़रीबों की फ़लाह व उत्थान का नारा लगाकर उन्हें मालदार तबक़े के ख़िलाफ़ उकसाया जा रहा है, इस तहरीक (आंदोलन) से ग़रीबों का भला कहाँ तक होता है? यह एक मुस्तक़िल विषय है, मगर यहाँ यह कहना चाहता हूँ कि अमीर व ग़रीब की यह जंग सिर्फ़ इसलिए पैदा हुई कि अल्लाह तआ़ला ने मालदार तबक़े के ज़िम्मे कमज़ोर ग़रीब तबक़े के जो हुक़ूक़ आ़यद किए थे उनसे उन्होंने लापरवाही की। अगर पूरे मुल्क की दौलत का चालीसवाँ हिस्सा ज़रूरत-मन्दों में तक़सीम कर दिया जाए और यह अ़मल एक वक़्ती सी चीज़ न रहे बल्कि एक निरंतर अ़मल की शक्ल इख़्तियार कर ले और अमीर तबक़ा किसी तरग़ीब (प्रलोभन) व उभारने और किसी ज़ोर-ज़बरदस्ती के बग़ैर हमेशा यह फ़रीज़ा अदा करता रहे और फिर इस रक़म की इन्साफ़ के साथ तक़सीम मुसलसल (लगातार) होती रहे तो कुछ मुद्दत बाद आप देखेंगे कि ग़रीबों को अमीरों से शिकायत ही नहीं रहेगी और अमीर व ग़रीब की जिस जंग से दुनिया जहन्नम का घर बनी हुई है वह इस निज़ाम की बदौलत राहत व सुकून की जन्नत बन जाएगी।

मैं सिर्फ़ पाकिस्तान की मिल्लते इस्लामिया से नहीं बल्कि दुनिया भर के इनसानों और समाजों से कहता हूँ कि वे इस्लाम के ज़कात सिस्टम को लागू करके इसकी बरकतों का मुशाहिदा करें और मालदार मुल्कों की जितनी दौलत

कम्यूनिज़म का मुक़ाबला करने पर ख़र्च हो रही है वह भी इसी मद में शामिल करें।

2. माल व दौलत की हैसियत इनसानी रोज़गार और ज़िन्दगी गुज़ारने में वही है जो ख़ून की बदन में है। अगर ख़ून की गर्दिश में फ़तूर आ जाए तो इनसानी ज़िन्दगी को ख़तरा लाहिक़ हो जाता है, और कई बार दिल का दौरा पड़ने से इनसान की अचानक मौत हो जाती है। ठीक इसी तरह अगर दौलत की गर्दिश (घूमना) इन्साफ़ के साथ न हो तो सामाजिक ज़िन्दगी ख़तरे में होती है और किसी वक़्त भी दिल की धड़कन बन्द हो जाने का ख़ौफ़ तारी रहता है। हक़ तआ़ला ने दौलत की न्यायिक तक़सीम और आ़दिलाना गर्दिश के लिए जहाँ और बहुत सी तदबीरें इरशाद फ़रमाई हैं उनमें से एक ज़कात व सदक़ात का निज़ाम भी है, और जब तक यह निज़ाम सही तौर पर नाफ़िज़ न हो और समाज इस निज़ाम को पूरे तौर पर हज़म न कर ले तब तक न दौलत की न्यायिक गर्दिश का तसव्वुर किया जा सकता है और न समाज टूट-फूट और पतन से महफ़ूज़ रह सकता है।

3. पूरे समाज को एक इकाई तसव्वुर कीजिए और समाज के अफ़राद को उसके अंग समझिये। आप जानते हैं कि किसी हादसे या सदमे से किसी उज़्व (अंग) में ख़ून जमा होकर जम जाए तो वह गल सड़कर फोड़े फुन्सी की शक्ल में पीप बनकर बह निकलता है, इसी तरह जब समाज के आज़ा (अंगों और हिस्सों) में ज़रूरत से ज़्यादा ख़ून जमा हो जाता है तो वह भी सड़ने लगता है और फिर कभी ऐश व आरामअ और फ़ुज़ूल-ख़र्ची की शक्ल में निकलता है कभी अ़दालतों और

वकीलों के चक्कर में ज़ाया होता है, कभी बीमारियों और अस्पतालों में लगता है, बभी ऊँची-ऊँची बिल्डिगों और महलों की तामीर में बरबाद हो जाता है (और इस बरबादी का एहसास आदमी को उस वक़्त होता है जब उसकी गिरफ़्तारी के वारन्ट जारी हो जाते हैं और उसे ख़ाली हाथ यहाँ से बाहर निकाल दिया जाता है)। क़ुदरत ने ज़कात व सदक़ात के ज़रिये उन फोड़े फुन्सियों का इलाज तजवीज़ किया है, जो दौलत के एक जगह जमा होने, जम जाने की बदौलत समाज के जिस्म पर निकल आती हैं।

4. अपनी जिन्स और अपने भाईयों से हमदर्दी इनसानियत का उम्दा तरीन वस्फ़ है, जिस शख़्स का दिल अपने जैसे इनसानों की बेचारगी, ग़ुर्बत व तंगदस्ती, भूख, फ़क़्र व फ़ाक़े और परेशान हाली देखकर नहीं पसीजता वह इनसान नहीं जानवर है, और चूँकि ऐसे मौक़ों पर शैतान और नफ़्स, इनसानी हमदर्दी में अपना रोल अदा करने से रोकते हैं इसलिए बहुत कम आदमी इसका हौसला करते हैं। हक़ तआ़ला शानुहू ने अपने कमज़ोर बन्दों की मदद के लिए अमीर लोगों के ज़िम्मे यह फ़रीज़ा आ़यद कर दिया है, ताकि अल्लाह के इस फ़रीज़े के सामने वह किसी नादान दोस्त के मश्विरे पर अ़मल न करे।

5. माल जहाँ इनसानी ज़िन्दगी (गुज़ारा करने) की बुनियाद है वहाँ इनसानी अख़्लाक़ के बनाने और बिगाड़ने में भी इसको गहरा दख़ल है। बाज़ दफ़ा माल का न होना इनसान को ग़ैर-इनसानी हरकतों पर आमादा करता है, और वह समाज की ना-इन्साफ़ी को देखकर सामाजिक सुकून को

ग़ारत करने की ठान लेता है।

कई बार वह चोरी, डकैती, सट्टा और जुआ जैसी बुरी हरकतें शुरू कर देता है, कभी ग़ुर्बत व तंगदस्ती के हाथों तंग आकर वह अपनी ज़िन्दगी से हाथ धो लेने का फ़ैसला कर लेता है, कभी वह पेट का जहन्नम भरने के लिए अपनी इज़्ज़त व आबरू को नीलाम करता है और कभी फ़क्र व फ़ाक़े का इलाज ढूँढ़ने के लिए अपने दीन व ईमान का सौदा करता है। इसी बिना पर एक हदीस में फ़रमाया गया है:

كادالفقران يكون كفرا.

"यानी फ़क्र व फ़ाक़ा आदमी को क़रीब-क़रीब कुफ़्र तक पहुँचा देता है" और फ़क्र व फ़ाक़े में अपने मालिके हक़ीक़ी की नाशुक्री करना तो एक आ़म बात है।

(बैहक़ी फ़ी शुअ़बिल-ईमान, मिश्कात पेज 429)

ये तमाम ग़ैर-इनसानी हरकतें समाज में फ़क्र व फ़ाक़े से जन्म लेती हैं और बहुत सी बार घरानों के घरानों को बरबाद करके रख देती हैं। इनका हल और समाधान ढूँढ़ना समाज की सामूहिक ज़िम्मेदारी है, और सदक़ात व ज़कात के ज़रिये ख़ालिके़ कायनात ने इन बुराईयों का दरवाज़ा बन्द भी फ़रमाया है।

6. इसके उलट (विपरीत) बाज़ अख़्लाक़ी ख़राबियाँ वे हैं जो माल व दौलत की ज़्यादती से जन्म लेती हैं। अमीर-ज़ादों को जो चोंचले सूझते हैं और जिस क़िस्म की ग़ैर-इनसानी हरकतें उनसे सरज़द होती हैं, उन्हें बयान करने की हाजत नहीं। सदक़ात व ज़कात के ज़रिये हक़ तआ़ला ने माल व

दौलत से पैदा होने वाली अख़्लाक़ी बुराईयों पर भी बन्दिश लगायी है ताकि उन लोगों को ग़रीबों की ज़रूरतों का भी एहसास रहे और ग़रीबों की हालत उनके लिए इबरत व सबक़ का सामान भी बनता रहे।

7. ज़कात व सदक़ात के निज़ाम (सिस्टम) में एक हिक्मत यह भी है कि इससे वे मुसीबतें व आफ़तें टल जाती हैं जो इनसान पर नाज़िल होती रहती हैं। इसी बिना पर बहुत सी हदीसों में बयान फ़रमाया गया है कि सदक़े से बलायें दूर होती हैं और इनसान की जान व माल आफ़तों से महफ़ूज़ रहती है।

आ़म लोगों को देखा गया है कि जब कोई शख़्स बीमार पड़ जाए तो सदक़े का बकरा ज़िबह कर देते हैं, वे बेचारे यह समझते हैं कि शायद बकरे की जान की क़ुरबानी देने से मरीज़ की जान बच जाएगी। उन लोगों ने सदक़े के मफ़हूम को नहीं समझा, सदक़ा सिर्फ़ बकरा ज़िबह कर देने का नाम नहीं बल्कि अपने पाक माल से कुछ हिस्सा ख़ुदा तआ़ला की रज़ा के लिए किसी ज़रूरत-मन्द के हवाले कर देने का नाम है। जिसमें दिखावा व तकब्बुर और फ़ख़्र की कोई गंदगी न हो, इसलिए जब कोई आफ़त पेश आए तो सदक़े से उसका इलाज करना चाहिए। आप जितनी हिम्मत व गुंजाईश रखते हैं, बाज़ार से उसकी क़ीमत मालूम करके उतनी क़ीमत किसी मोहताज को दे दीजिए या बकरा ही ख़रीद कर किसी को सदक़ा कर दीजिए।

ग़र्ज़ यह कि बकरे को ज़िबह करने को बलाओं के दूर करने में कोई दख़ल नहीं, बल्कि बला तो सदक़े से टलती है।

इसलिए सिर्फ़ शदीद बीमारी नहीं बल्कि हर आफ़त व मुसीबत में सदक़ा करना चाहिए। बल्कि आफ़तों और मुसीबतों के नाज़िल होने से पहले सदक़े से उनको दूर करना चाहिए। हमारा मालदार तबक़ा जिस क़द्र दौलत में खेलता है बद-क़िस्मती से आफ़तों और मुसीबतों का शिकार भी उसी क़द्र ज़्यादा होता है।

इसका सबब भी यही है कि वे अपने माल की ज़कात ठीक-ठीक अदा नहीं करते, और जितना अल्लाह तआ़ला ने दिया है उतना अल्लाह तआ़ला की राह में ख़र्च नहीं करते।

8. ज़कात सदक़ात का एक फ़ायदा यह भी है कि उससे माल व दौलत में बरकत होती है, और ज़कात व सदक़ात में बुख़्ल करना आसमानी बरकतों के दरवाज़े बन्द कर देता है। हदीस में है कि ज़ो क़ौम ज़कात रोक लेती है अल्लाह तआ़ला उस पर क़हत (अकाल) और ख़ुशक-साली (सूखा) मुसल्लत कर देता है, और आसमान से बारिश बन्द हो जाती है।

(तबरानी, हाकिम)

एक और हदीस में है कि चार चीज़ों का नतीजा चार चीज़ों की शक्ल में ज़ाहिर होता है।

(1) जब कोई क़ौम अ़हद तोड़ती है तो उस पर दुश्मनों को मुसल्लत कर दिया जाता है।

(2) जब वह अल्लाह के उतारे हुए फ़ैसले के ख़िलाफ़ फ़ैसला करती है तो क़त्ल व ख़ूँरेज़ी और मौत आ़म हो जाती है।

(3) जब कोई क़ौम ज़कात रोक लेती है तो उनसे बारिश रोक ली जाती है।

(4) जब कोई क़ौम नाप-तौल में कमी करती है तो ज़मीन की पैदावार कम हो जाती है, और क़ौम पर क़हत (भुखमरी) मुसल्लत हो जाता है। (तबरानी)

खुलासा यह कि खुदा तआ़ला का तजवीज़ फ़रमाया हुआ निज़ामे ज़कात व सदक़ात, वह इन्क़िलाबी निज़ाम (काया पलट करने वाला सिस्टम) है जिससे समाज को राहत व सुकून की ज़िन्दगी नसीब हो सकती है, और इससे मुँह मोड़ने का नतीजा समाज के अफ़राद की बेचैनी व बेइत्मीनानी की शक्ल में ज़ाहिर होता है।

9. ये तमाम बातें तो वे थी जिनका ताल्लुक़ दुनिया की इसी ज़िन्दगी से है, लेकिन एक मोमिन जो सच्चे दिल से अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान रखता हो, यह दुनियावी ज़िन्दगी ही उसके सामने नहीं, बल्कि उसकी ज़िन्दगी की सारी मेहनत व कोशिश आख़िरत के लिए है, वह इस दारे फ़ानी की मेहनत से अपना आख़िरत का घर सजाना चाहता है, वह इस थोड़ी सी चन्द रोज़ा ज़िन्दगी से आख़िरत की हमेशा की ज़िन्दगी की राहत व सुकून को तलाश करता है।

आ़म इनसानों की नज़र सिर्फ़ इस दुनिया तक सीमित है और वे जो कुछ करते हैं सिर्फ़ इसी दुनिया की फ़लाह व बहबूद (तरक़्क़ी और फ़ायदे) के लिए करते हैं, जिस मन्सूबे की तश्कील करते हैं महज़ इस ज़िन्दगी के ख़ाकों और नक़्शों को सामने रखकर करते हैं, अल्लाह तआ़ला ने सदक़ों व ज़कात के ज़रिये मोमिनों को आख़िरत के बैंक में अपनी दौलत मुन्तक़िल करने का गुर बताया है। ज़कात व सदक़ात

की शक्ल में जो रक़म दी जाती है वह डायरेक्ट आख़िरत के बैंक में जमा होती है, और यह आदमी के उस दिन काम आएगी जब वह ख़ाली हाथ यहाँ की चीज़ें यहीं छोड़कर रुख़्सत होगा।

सब ठाठ पड़ा रह जाएगा जब लाद चलेगा बनजारा

इसलिए बहुत ख़ुश-क़िस्मत हैं वे लोग जो अपनी दौलत यहाँ से वहाँ मुन्तक़िल करने में आगे बढ़ते हैं।

10. इनसान दुनिया में आता है तो बहुत से ताल्लुक़ात उसके साथ जुड़े होते हैं- माँ बाप का रिश्ता, बहन भाईयों का रिश्ता, अ़ज़ीज़ व अक़ारिब का रिश्ता, बाल-बच्चों का रिश्ता वग़ैरह-वग़ैरह। लेकिन मोमिन का एक रिश्ता अपने ख़ालिक़ व मोहसिन और महबूबे हक़ीक़ी भी है, और यह रिश्ता तमाम रिश्तों से मज़बूत भी है और पायदार भी। दूसरे सारे रिश्ते तोड़े भी जा सकते हैं और जोड़े भी जा सकते हैं, मगर यह रिश्ता किसी लम्हा न तोड़ा जा सकता है न उसका छोड़ना मुम्किन है। यह दुनिया में भी क़ायम है, मौत के वक़्त भी रहेगा, क़ब्र की अंधेरी कोठरी में भी रहेगा, मैदाने महशर में भी और जन्नत में भी। जूँ-जूँ ज़िन्दगी के दौर गुज़रते और बदलते रहेंगे यह रिश्ता मज़बूत से मज़बूत होता जाएगा और इसकी ज़रूरत का एहसास भी सब रिश्तों पर ग़ालिब आता जाएगा।

इस रिश्ते की राह में सबसे बढ़कर इनसान की नफ़्सानी ख़्वाहिशें बाधा और रोक होती हैं, और उन ख़्वाहिशों के पूरा करने का सबसे बड़ा ज़रिया माल है, ज़कात व सदक़ात के ज़रिये अल्लाह तआ़ला उसकी ख़्वाहिशों को कम से कम

करना चाहते हैं और बन्दे का जो रिश्ता उसके साथ है उसको ज़्यादा से ज़्यादा मज़बूत बनाना चाहते हैं।

इसलिए जो सदक़ा किसी फ़क़ीर व मिस्कीन को दिया जाता है वह दर असल उसको नहीं दिया जाता बल्कि यह अपनी माली क़ुरबानी का मामूली सा नज़राना है जो बन्दे की तरफ़ से महबूबे हक़ीक़ी की बारगाह में पेश किया जाता है। चुनाँचे हदीस में आता है कि जब बन्दा सदक़ा करता है तो अल्लाह तआ़ला उसे अपनी रज़ामन्दी के हाथ से क़बूल फ़रमाते हैं और फिर उसकी परवरिश फ़रमाते (यानी उसको बढ़ाते) रहते हैं, क़ियामत के दिन वह सदक़ा राई से पहाड़ बनाकर बन्दे को वापस कर दिया जाएगा। पस अफ़सोस है कि हम बारगाहे रब्बुल-इज़्ज़त में इतनी मामूली सी क़ुरबानी पेश करने से भी हिचकिचाएँ और हक़ तआ़ला शानुहू की बेशुमार इनायतों और रहमतों से ख़ुद को मेहरूम रखें?

ज़कात टैक्स नहीं

ऊपर बयान किये गये मज़मून से यह हक़ीक़त भी ज़ाहिर हो गई है कि ज़कात टैक्स नहीं बल्कि एक बहुत आला इबादत है। बाज़ लोगों के ज़ेहन में ज़कात का एक बहुत ही घटिया तसव्वुर है, वे इसको हुकूमत का टैक्स समझते हैं जिस तरह कि तमाम हुकूमतों में विभिन्न क़िस्म के टैक्स आ़यद किए जाते हैं, हालाँकि ज़कात किसी हुकूमत का आ़यद किया हुआ टैक्स नहीं, न रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस्लामी हुकूमत की ज़रूरियात के लिए इसको आ़यद किया है, बल्कि हदीस में साफ़ तौर पर इरशाद है कि ज़कात मुसलमानों

के मालदार तबक़े से लेकर उनके तंगदस्तों को लौटा दी जाए। इसी तरह यह समझना भी ग़लत है कि ज़कात देने वाले फ़ुक़रा व मसाकीन (यानी ग़रीब लोगों) पर कोई एहसान करते हैं, हरगिज़ नहीं! बल्कि ख़ुद ग़रीबों और मिस्कीनों का मालदारों पर एहसान है कि उनके ज़रिये से उन लोगों की रक़म ख़ुदाई बैंक में जमा हो रही है। अगर आप किसी को बैंक में जमा कराने के लिए कोई रक़म सुपुर्द करते हैं तो क्या आप उस पर एहसान कर रहे हैं? अगर यह एहसान नहीं तो फिर ग़रीबों को ज़कात देना भी उन पर एहसान नहीं।

पहली उम्मतों में जो माल अल्लाह तआ़ला की बारगाह में नज़राने के तौर पर पेश किया जाता था उसका इस्तेमाल करना किसी के लिए भी जायज़ नहीं था, बल्कि वह जलने वाली क़ुरबानी कहलाती थी, उसे क़ुरबानी के स्थान में रख दिया जाता था, अब अगर आसमान से आग आकर उसे राख कर जाती तो यह क़ुरबानी के क़बूल होने की अ़लामत थी और अगर वह चीज़ उसी तरह पड़ी रहती तो उसके मरदूद (यानी क़बूल न) होने की निशानी थी।

हक़ तआ़ला ने इस उम्मते मरहूमा पर यह ख़ास इनायत फ़रमाई कि अमीरों को हुक्म दिया गया कि वे जो चीज़ हक़ तआ़ला की बारगाह में पेश करना चाहें उसे उसके फ़ुलाँ-फ़ुलाँ बन्दों (ग़रीबों व मसाकीन) के हवाले कर दें, इस अ़ज़ीमुश्शान रहमत के ज़रिये एक तरफ़ ग़रीबों की ज़रूरतों के पूरा करने का इन्तिज़ाम कर दिया गया और दूसरी तरफ़ इस उम्मते मरहूमा के लोगों को रुस्वाई और ज़िल्लत से बचा लिया गया।

अब ख़ुदा ही जानता है कि कौन पाक माल से सदक़ा

करता है और कौन नापाक माल से। कौन ऐसा है जो महज़ अल्लाह की रज़ा के लिए देता है और कौन है जो नाम व नमूद और शोहरत व रिया के लिए। ग़र्ज़ यह कि ज़कात टैक्स नहीं बल्कि अल्लाह तआला की बारगाह में नज़राना है। यही वजह है कि अल्लाह तआला ने क़ुरआन मजीद में इसे "क़र्ज़े हसन" (अच्छा क़र्ज़) फ़रमाया है:

"कौन है जो अल्लाह को क़र्ज़े हसन दे, पस वह उसके लिए उसको कई गुना बढ़ा दे।" (सूरः ब-क़रह)

यहाँ सदक़ात को "क़र्ज़े हसन" से इसलिए ताबीर किया गया है कि जिस तरह क़र्ज़ वाजिबुल-अदा है इसी तरह सदक़ा करने वालों को मुत्मईन रहना चाहिए कि उनको यह सदक़ा भी हज़ारों बरकतों और सआदतों के साथ वापस कर दिया जाएगा। यह मतलब नहीं कि खुदा तआला को किसी की ज़रूरत और हाजत है, यही वजह है कि सदक़ा फ़क़ीर के हाथों में जाने से पहले अल्लाह तआला की बारगाह में पहुँच जाता है और फ़क़ीर गोया उस देने वाले से वुसूल नहीं कर रहा है, बल्कि यह उसकी तरफ़ से दिया जा रहा है जो सब का दाता है।

ज़कात हुकूमत क्यों वुसूल करे?

रहा यह सवाल कि जब ज़कात टैक्स नहीं बल्कि ख़ालिस इबादत है तो हुकूमत को इसका इन्तिज़ाम क्यों सौंपा जाए? इस सवाल का जवाब एक मुस्तक़िल किताब का विषय है, मगर यहाँ मुख़्तसर तौर पर इतना समझ लेना चाहिए कि इस्लाम पूरे समाज को एक इकाई क़रार देकर उसका

इन्तिज़ाम और व्यवस्था इस्लामी हुकूमत के सुपुर्द करता है, इसलिए वे ग़रीब व मसाकीन जो इस्लामी समाज का हिस्सा हैं, उनकी ज़रूरतों की ज़िम्मेदारी भी इस्लामी समाज की सत्ताधारी ताक़त के सुपुर्द है, और इस ज़िम्मेदारी के लिए उसने सदक़े व ज़कात का निज़ाम राईज फ़रमाया है, जो ग़रीबों और मसाकीन की कफ़ालत (ज़रूरतें पूरी करने) की सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी हुकूमत पर आयद की गई है। इसलिए इस मद के लिए मख़्सूस रक़म का बन्दोबस्त भी हुकूमत का फ़रीज़ा होगा।

यही वजह है कि जो लोग हुकूमत की जानिब से सदक़ों की वुसूली व इन्तिज़ाम पर मुक़र्रर होंगे हदीस पाक में उनको "अल्लाह के रास्ते में जिहाद करने वाले" के साथ तश्बीह दी गई है। (अबू दाऊद, तिर्मिज़ी) जिस में एक तरफ़ उनकी ख़िदमात को सराहा गया है और दूसरी तरफ़ उनकी नाज़ुक ज़िम्मेदारी का भी उन्हें एहसास दिलाया गया है। यानी अगर वे इस फ़रीज़े को अल्लाह के रास्ते में जिहाद समझ कर अदा करेंगे तब अपनी ज़िम्मेदारी से बरी होंगे। और अगर उन्होंने इस माल में एक पैसे की भी ख़ियानत की तो उन्हें अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि वे ख़ुदाई माल में ख़ियानत के मुजरिम हो रहे हैं, जो उनके लिए दोज़ख़ की आग का सामान है। चुनाँचे एक हदीस में इरशाद है किः

> "जिस शख़्स को हमने किसी काम पर मुक़र्रर किया और उसके लिए एक वज़ीफ़ा (तन्ख़्वाह) भी मुक़र्रर कर दिया, उसके बाद अगर वह उस माल से कुछ लेगा तो वह ग़नीमत (हासिल होने वाले माल) में ख़ियानत करने

वाला होगा।" (अबू दाऊद)

ज़कात के चन्द मसाईल

ज़कात हर साहिबे निसाब मुसलमान पर फ़र्ज़ है, उसके मसाईल उलेमा हज़रात से अच्छी तरह समझ लेने चाहिएँ। मैं यहाँ चन्द मसाईल दर्ज करता हूँ मगर अ़वाम सिर्फ़ अपनी समझ पर भरोसा न करें बल्कि उलेमा से अच्छी तरह तहक़ीक़ कर लें।

1: अगर किसी शख़्स की मिल्कियत में साढ़े बावन तोले (612.35 ग्राम) चाँदी या साढ़े सात तोले (87.5 ग्राम) सोना है या इतनी मालियत का नक़द रुपया है, या फिर इतनी मालियत का तिजारत का माल है तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ है। और उसको "साहिबे निसाब" कहा जायेगा।

2: अगर किसी शख़्स के पास कुछ चाँदी हो कुछ सोना हो, या कुछ रुपया या कुछ माले तिजारत हो और उन सब की कुल मालियत साढ़े बावन तोले (612.35 ग्राम) चाँदी के बराबर हो तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ होगी।

3: कारख़ाने और फ़ैक्ट्री वग़ैरह की मशीनों पर ज़कात नहीं, लेकिन उनमें जो माल तैयार होता है उस पर ज़कात है, इसी तरह जो कच्चा माल कारख़ाने में मौजूद हो उस पर ज़कात है।

4: सोने चाँदी की हर चीज़ पर ज़कात है, चुनाँचे सोने चाँदी के ज़ेवर, सोने चाँदी के बरतन, यहाँ तक कि सच्चा गोटा, ठप्पा, असली ज़री, सोने चाँदी के बटन, चाहे कपड़ों में लगे हुए हों, उन सब पर ज़कात है।

5: कारख़ानों और मिलों के शेयर पर भी ज़कात वाजिब है, जबकि उन शेयर की मिक़दार (मात्रा) बक़द्रे निसाब हो, या दूसरी क़ाबिले ज़कात चीज़ों को मिलाकर निसाब बन जाता हो, अलबत्ता मशीनरी और फ़र्नीचर वग़ैरह इस्तेमाल की चीज़ों पर ज़कात नहीं होगी। इसलिए हर हिस्सेदार के हिस्से में उसकी-जितनी क़ीमत आती है उसको अलग करके बाक़ी की ज़कात अदा करनी होगी।

6: सोना चाँदी माले तिजारत और कम्पनी के शेयर की जो क़ीमत ज़कात का साल पूरा होने के दिन होगी उसके मुताबिक़ ज़कात अदा की जाएगी।

7: साल के अव्वल व आख़िर में निसाब का पूरा होना शर्त है, अगर बीच साल में रक़म कम हो जाए तो उसका एतिबार नहीं। जैसे एक शख़्स साल शुरू होने के वक़्त तीन हज़ार रुपये का मालिक था, तीन महीने बाद उसके पास पन्द्रह सौ रुपये रह गए, छह महीने बाद चार हज़ार रुपये हो गए और साल के ख़त्म पर साढ़े चार हज़ार रुपये का मालिक था, तो साल पूरा होने के वक़्त उस पर साढ़े चार हज़ार रुपये की ज़कात वाजिब होगी, बीच साल में अगर रक़म घटती बढ़ती रही उसका एतिबार नहीं।

नोटः आजकल साढ़े बावन तोले चाँदी की क़ीमत तक़रीबन ग्यारह हज़ार रुपये है।

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

8: पी. एफ़ पर वुसूलयाबी के बाद ज़कात फ़र्ज़ है, वुसूल होने से पहले सालों की ज़कात फ़र्ज़ नहीं।

9: साहिबे निसाब अगर पेशगी ज़कात अदा कर दे तब

भी जायज़ है, लेकिन साल के दौरान अगर माल बढ़ गया तो साल ख़त्म होने पर ज़ायद रक़म अदा कर दे।

ज़कात के मसारिफ़

1: ज़कात सिर्फ़ ग़रीबों व मसाकीन का हक़ है, हुकूमत उसको आ़म फ़ायदों के कामों में इस्तेमाल नहीं कर सकती।

2: किसी शख़्स को उसके काम या ख़िदमत के मुआ़वज़े में ज़कात की रक़म नहीं दी जा सकती, लेकिन ज़कात की वुसूल होने पर जो अ़मला हुकूमत की तरफ़ से मुक़र्रर हो उनकी तन्ख़्वाह उस फ़न्ड से अदा करना सही है।

3: हुकूमत सिर्फ़ ज़ाहिरी मालों की ज़कात वुसूल करेगी, बातिनी मालों (यानी जो सबके सामने ज़ाहिर न हों) की ज़कात हर शख़्स अपनी जानकारी के मुताबिक़ अदा कर सकता है। (कारख़ानों और मिलों में तैयार होने वाला माल, तिजारत का माल और बैंक में जमा शुदा सरमाये ज़ाहिरी माल हैं, और जो सोना चाँदी नक़दी घरों में रहती है उनको बातिनी माल कहा जाता है)।

4: किसी ज़रूरत-मन्द को इतना रुपया दे देना जितने पर ज़कात फ़र्ज़ होती है मक्रूह है, लेकिन ज़कात अदा हो जाएगी।

ज़कात अदा करने के फ़ज़ाईल और न देने का वबाल

सवालः ज़कात देने पर क्या ख़ुशख़बरी और न देने पर

क्या वईद (धमकी) है?

जवाबः ज़कात देने से माल पाक होता है और हक़ तआ़ला की रज़ा हासिल होती है, और न देने से माल नापाक रहता है और ख़ुदा तआ़ला नाराज़ होता है। क़ुरआन करीम और हदीसे नबवी में ज़कात न देने के बहुत से वबाल बयान फ़रमाए गए हैं। ऐसा माल साँप की शक्ल में मालदार को काटेगा और कहेगा कि मैं तेरा ही माल हूँ जिसको तू जमा करता था, और ख़ुदा तआ़ल के रास्ते में ख़र्च नहीं करता था।

क़ुरआन करीम और हदीस पाक में ज़कात व सदक़ों के बड़े फ़ज़ाईल बयान किए गए हैं, और ज़कात न देने पर सख़्त वईदें (सज़ा की धमकियाँ) वारिद हुई हैं। उनकी तफ़सील हज़रत शैख़ुल-हदीस सय्यिदी व मुर्शिदी मौलाना मुहम्मद ज़करिया काँधलवी मुहाजिरे मदनी नव्वरल्लाहु मर्क़दहू कि किताब "फ़ज़ाईले सदक़ात" में देख ली जाए। यहाँ मज़मून को मुख़्तसर करने के पेशे-नज़र एक-एक आयत और हदीस फ़ज़ाईल में और एक-एक आयत और हदीस वईद में नक़ल करता हूँ।

ज़कात व सदक़ात की फ़ज़ीलत

مَثَلُ الَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ كَمَثَلِ حَبَّةٍ اَنْبَتَتْ سَبْعَ سَنَابِلَ فِيْ كُلِّ سُنْبُلَةٍ مِّائَةُ حَبَّةٍ. وَاللّٰهُ يُضٰعِفُ لِمَنْ يَّشَآءُ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ۝ اَلَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ثُمَّ لَا يُتْبِعُوْنَ مَآ اَنْفَقُوْا مَنًّا وَّلَآ اَذًى لَّهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۝

तर्जुमाः जो लोग अल्लाह की राह में अपने मालों को ख़र्च करते हैं, उनके ख़र्च किए हुए मालों की हालत ऐसी है जैसे एक दाने की हालत, जिससे (फ़र्ज़ करो) सात बालें जमीं (और) हर बाल के अन्दर सौ दाने हों, और यह बढ़ोतरी ख़ुदा तआ़ला जिसको चाहता अ़ता फ़रमाता है। और अल्लाह तआ़ला बड़ी वुस्अ़त वाले हैं, जानने वाले हैं। जो लोग अपना माल अल्लाह की राह में ख़र्च करते हैं फिर ख़र्च करने के बाद न तो (उस पर) एहसान जताते हैं और न (बर्ताव से) उसको तकलीफ़ पहुँचाते हैं, उन लोगों को उन (के आमाल) का सवाब मिलेगा, उनके परवर्दिगार के पास, और न उन पर कोई ख़तरा होगा और न ये ग़मगीन होंगे।

(सूरः ब-क़रह आयत 261-252, तर्जुमा हज़रत थानवी रह0)

عن ابی هریرة رضی الله عنه قال قال رسول الله صلی الله علیه و سلم من تصدق بعدل تمرة من کسب طیب و لایقبل الله الا الطیب فان الله یتقبلها بیمینه ثم یربیها لصاحبها کما یربی احدکم فلوه حتی تکون مثل الجبل. (متفق علیه)

हदीसः हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया- जो शख़्स एक खजूर के दाने के बराबर पाक कमाई से सदक़ा करे, और अल्लाह तआ़ला सिर्फ़ पाक ही को क़बूल फ़रमाते हैं, तो अल्लाह तआ़ला उसको अपने हाथ में लेकर क़बूल फ़रमाते हैं, फिर उसके मालिक के लिए उसकी परवरिश फ़रमाते हैं, जिस तरह कि तुम में से एक शख़्स अपनी घोड़ी

के बच्चे की परवरिश करता है, यहाँ तक कि वह (एक खजूर के दाने का सदक़ा क़ियामत के दिन) पहाड़ के बराबर हो जाएगा। (बुख़ारी व मुस्लिम)

ज़कात अदा न करने पर वईद

وَالَّذِيْنَ يَكْنِزُوْنَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَا يُنْفِقُوْنَهَا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ۝ يَوْمَ يُحْمٰى عَلَيْهَا فِيْ نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوٰى بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوْبُهُمْ وَظُهُوْرُهُمْ هٰذَا مَا كَنَزْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ فَذُوْقُوْا مَا كُنْتُمْ تَكْنِزُوْنَ ۝

तर्जुमाः जो लोग सोने और चाँदी का ज़ख़ीरा जमा करते हैं और उसे अल्लाह के रास्ते में ख़र्च नहीं करते, उन्हें दर्दनाक अज़ाब की ख़ुशख़बरी सुना दो, जिस दिन उन सोने चाँदी के ख़ज़ानों को जहन्नम की आग में तपा कर उनके चेहरों, उनकी पुश्तों और उनके पहलुओं (करवटों) को दाग़ा जाएगा और उनसे कहा जाएगा कि यह था तुम्हारा माल जो तुमने अपने लिए जमा किया था, पस अपने जमा किए की सज़ा चखो।

(सूरः तौबा आयत 34-35)

عن ابن مسعود رضى اللّٰه عنه عن النبى صلى الله عليه وسلم قال مامن رجل لايودى زكوة ماله الا جعل الله يوم القيمة فى عنقه شجاعا ثم قرأعلينا مصداقه من كتاب الله....

وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ يَبْخَلُوْنَ بِمَآ اٰتٰهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ.

हदीसः हज़रत इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु नबी करीम

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद नक़ल करते हैं कि जो शख़्स अपने माल की ज़कात अदा नहीं करता क़ियामत के दिन उसका माल गंजे साँप की शक्ल में उसकी गर्दन में डाल दिया जाएगा। फिर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस मज़मून की आयत हमें पढ़कर सुनाई। (तिर्मिज़ी, नसई, इब्ने माजा, मिश्कात पेज 157)

आयत का तर्जुमा यह है:

"और हरगिज़ ख़्याल न करें ऐसे लोग जो ऐसी चीज़ में बुख़्ल (कन्जूसी) करते हैं जो अल्लाह तआ़ला ने उनको अपने फ़ज़्ल से दी है, कि यह बात कुछ उनके लिए अच्छी होगी, बल्कि यह बात उनकी बहुत बुरी है, वे लोग क़ियामत के रोज़ तौक़ पहना दिए जाएँगे, उसका जिसमें उन्होंने बुख़्ल किया था।" (आलि इमरान पारः 4 आयत 180, तर्जुमा हज़रत थानवी रह०)

ज़कात के डर से ग़ैर-मुस्लिम लिखवाना

सवालः एक साहिब ने एक बेवा औरत को मश्विरा दिया है कि अगर वह अपने आपको ग़ैर-मुस्लिम लिखवा दें तो ज़कात नहीं कटेगी, क्या ऐसा करने से ईमान पर असर नहीं होगा?

जवाबः किसी शख़्स का अपने आपको ग़ैर-मुस्लिम लिखवाना कुफ़्र है, और ज़कात से बचने के लिए ऐसा करना डबल कुफ़्र है, और किसी को कुफ़्र का मश्विरा देना भी कुफ़्र है। पस जिस शख़्स ने बेवा को ग़ैर-मुस्लिम लिखवाने का मश्विरा दिया उसको अपने ईमान और निकाह की तजदीद

(नवीकरण) करनी चाहिए और अगर बेवा ने उसके कुफ़्रिया मश्विरे पर अ़मल कर लिया हो तो उसको भी नये सिरे से ईमान की तजदीद करनी चाहिए। इसी के साथ हुकूमत को भी अपने इस निज़ामे ज़कात पर नज़रे सानी करनी (एक बार फिर सोचना) चाहिए जो लोगों को मुर्तद करने का सबब बन रहा है, उसकी आसान सूरत यह है कि हुकूमत मुसलमानों के माल से जितनी मिक़दार "ज़कात" के नाम से वुसूल करती है (यानी ढाई फ़ीसद) उतनी ही मिक़दार ग़ैर-मुस्लिमों के माल से "रिफ़ाही टैक्स" (यानी अ़वाम के फ़ायदे के कामों के लिये टैक्स) के नाम से वुसूल किया करे, इस सूरत में किसी को ज़कात से फ़रार की राह नहीं मिलेगी, और ग़ैर-मुस्लिमों पर रिफ़ाही टैक्स का आ़यद करना कोई जुल्म व ज़्यादती भी नहीं, क्योंकि हुकूमत की अ़वामी सहूलतों से ग़ैर-मुस्लिम लोग भी बराबर का फ़ायदा उठाते हैं, और इस फ़न्ड को ग़ैर-मुस्लिम माज़ूरों की मदद व सहयोग और ख़बरगीरी में ख़र्च किया जा सकता है।

नोटः ये सवालात पाकिस्तान में पूछे गये और वहाँ यह सिस्टम है कि साल पूरा होने पर हुकूमत मुस्लिम खाता धारकों के खाते से ढाई फ़ीसद रक़म ज़कात के नाम पर जमा कर लेती है। हालाँकि यह बड़ी सहूलत की बात है, क्योंकि अब हुकूमत की ज़िम्मेदारी है कि उस रक़म को उसके सही मस्रफ़ (ख़र्च करने की जगह) में ख़र्च करे, मगर जो लोग ज़कात नहीं देते उनको यह सहूलत भी मुसीबत दिखाई देती है। अल्लाह तआ़ला मुसलमानों को अ़क़्ल नसीब फ़रमाये कि कुछ लोग पैसे के लिये ईमान जैसी दौलत की भी परवाह नहीं करते।

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

ज़कात किस पर फ़र्ज़ है?

बालिग़ पर ज़कात

सवालः ज़कात कितनी उम्र के लोगों पर वाजिब है?

जवाबः ज़कात बालिग़ पर वाजिब है और बुलूग़ की ख़ास अ़लामतें (निशानियाँ और पहचान) मशहूर हैं, अगर लड़का लड़की पन्द्रह साल के हो जाएँ मगर कोई अ़लामत बालिग़ होने की ज़ाहिर न हो तो पन्द्रह साल की उम्र पूरी होने पर वे बालिग़ तसव्वुर किए जाएँगे।

नाबालिग़ के माल पर ज़कात

सवालः हुकूमत ने बैंक एकाउन्ट में से ज़कात कम करने के अहकाम सादिर फ़रमाए हैं तो यह फ़रमाएँ कि छोटे बच्चों के नाम से उनके भविष्य के लिए जो रक़म बैंक में जमा कराई जाती है, या विभिन्न मौक़ों और पार्टियों में उनको रक़म मिलती है और वह भी बैंक में जमा होती है, तो उस पर ज़कात अदा होती है या नहीं?

जवाबः नाबालिग़ बच्चे के माल में ज़कात नहीं, हुकूमत अगर नाबालिग़ बच्चे के माल से ज़कात काट लेती है तो यह सही नहीं।

नाबालिग़ की मिल्कियत पर ज़कात नहीं

सवालः मैं अपनी बच्ची के लिए कुछ रक़म बचाया करता हूँ जो कि उसकी मिल्कियत तसव्वुर की जा रही है, मगर वह

अभी तक नाबालिग़ है, ज़कात अदा करना मुझ पर फ़र्ज़ है या नहीं?

जवाबः जो रक़म नाबालिग़ बच्ची बच्चे की मिल्कियत हो उस पर उसके बालिग़ होने तक ज़कात नहीं दी जाएगी, बालिग़ होने के बाद जब साल गुज़र जाए तब उस पर ज़कात फ़र्ज़ होगी।

अगर नाबालिग़ बच्चियों के नाम सोना कर दिया तो ज़कात किस पर होगी

सवालः मेरी तीन बेटियाँ हैं, उम्र 12 साल, 10 साल और 8 साल। मैंने उनकी शादी के लिए 20 तोला सोना ले रखा है, इसके अ़लावा और दूसरी चीज़ें जैसे बरतन कपड़े वग़ैरह भी आहिस्ता- आहिस्ता जमा कर रहे हैं। क्या इन चीज़ों पर भी ज़कात देनी पड़ेगी? बच्चियों के नाम पर कोई पैसा वग़ैरह जमा नहीं है।

जवाबः अगर आपने इस सोने का मालिक अपनी बच्चियों को बना दिया है तो उनके जवान होने तक तो उन पर ज़कात नहीं, जवान होने के बाद उनमें जो साहिबे निसाब हों उन पर ज़कात होगी, और अगर बच्चियों को मालिक नहीं बनाया मिल्कियत आप ही की है तो उस सोने पर ज़कात फ़र्ज़ है, बरतन कपड़े वग़ैरह इस्तेमाल की जो चीज़ें आपने उनके लिए ले रखी हैं उन पर ज़कात नहीं।

यतीम नाबालिग़ बच्चे पर ज़कात नहीं

सवालः .... बच्चे उमर और ज़ैनब जो बालिग़ नहीं, अब

ज़ैद के इन्तिक़ाल के बाद उनके वली मसलन् बकर को शरीअ़त यह इजाज़त देती है कि उमर और ज़ैनब के माल से सदक़ा-ए-फ़ित्र वग़ैरह अदा करे, उनके लिए या कोई और सदक़ा वग़ैरह जायज़ है या नहीं?

जवाबः नाबालिग़ बच्चे के माल पर ज़कात वाजिब नहीं, अलबत्ता सदक़ा-ए-फ़ित्र यतीम नाबालिग़ की तरफ़ से अदा करना भी ज़रूरी है, जबकि वह नाबालिग़ साहिबे माल हो, उसके अ़लावा कोई और सदक़ा यतीम के माल में से करना जायज़ नहीं।

पागल पर ज़कात नहीं है

सवालः मजनूँ (पागल) शख़्स पर नमाज़ फ़र्ज़ नहीं, अगर कोई मजनूँ बहुत सी दौलत का मालिक हो तो क्या उसके माल से ज़कात की रक़म काटना जायज़ है?

जवाबः मजनूँ के माल पर ज़कात नहीं।

ज़ेवर की ज़कात

सवालः जबकि मर्द हज़रात पैसा कमाते हैं तो बीवी के ज़ेवरात की ज़कात शौहर को देनी चाहिए या बीवी को अपने जेब ख़र्च से जोड़कर? अगर शौहर ज़कात अदा न करे, अगरचे बीवी चाहती हो और बीवी के पास रुपया भी न हो कि ज़कात दे सके तो गुनाह किस को मिलेगा?

जवाबः ज़ेवर अगर बीवी की मिल्कियत है तो ज़कात उसी के ज़िम्मे वाजिब है, और ज़कात न देने पर वही गुनाहगार होगी। शौहर के ज़िम्मे उसका अदा करना लाज़िम

नहीं। बीवी या तो अपना जेब ख़र्च बचाकर ज़कात अदा करे या ज़ेवरात का एक हिस्सा ज़कात में दे दिया करे।

औरत पर ज़ेवर की ज़कात

सवालः आपने अपने कालम में एक साहिब को उनकी बीवी के ज़ेवरात पर ज़कात की अदायेगी उनकी बीवी की ज़िम्मेदारी बताई है। अर्ज़ यह है कि औरत तो शौहर पर निर्भर होती है उसकी सारी की सारी ज़िम्मेदारी शौहर पर होती है, औरत की कफ़ालत (ख़र्च और ज़रूरतें पूरी करना) तो मर्द करता है, तो क्या उन ज़ेवरात पर जो औरत को दहेज में या तोहफ़े में मिले हैं, उन पर ज़कात की ज़िम्मेदारी शौहर पर नहीं है? अगर नहीं है तो फिर औरत को क्या करना चाहिए कि वह ज़कात अदा कर सके।

जवाबः ज़कात जिन ज़ेवरात पर फ़र्ज़ हो वे अगर औरत की मिल्कियत में हैं तो ज़ाहिर है कि ज़कात मालिक ही पर फ़र्ज़ होगी और ज़कात अदा करने की ज़िम्मेदारी भी मालिक ही पर होगी। शौहर अगर उसके कहने पर ज़कात अदा करे तो अदा हो जाएगी वरना औरत पर लाज़िम होगा कि ज़कात में उन ज़ेवरात का हिस्सा बक़द्रे-ज़कात निकाल दिया जाए।

बीवी की ज़कात शौहर के ज़िम्मे नहीं

सवालः एक थोड़ी आमदनी वाले शख़्स की बीवी शादी के मौक़े पर दस तोले सोना ज़ेवरात की शक्ल में लाती है, क्या शौहर के लिए ज़रूरी है कि हर हाल में उस पर ज़कात अदा करे?

जवाबः चूँकि ये ज़ेवरात बेगम साहिबा की मिल्कियत में हैं इसलिए उस ज़ेवर की ज़कात बेगम साहिबा के ज़िम्मे है, ग़रीब शौहर के ज़िम्मे नहीं। औरत को चाहिए कि उन ज़ेवरात का बक़द्रे वाजिब हिस्सा ज़कात में दे दिया करे, अपनी ज़कात शौहर के ज़िम्मे न डाले।

बीवी के ज़ेवर की ज़कात का मुतालबा किस से होगा?

सवालः अगर शौहर की ज़ाती मिल्कियत में कोई ज़ेवर ऐसा न हो कि उस पर ज़कात वाजिब होती हो लेकिन जब उसकी बीवी शादी होकर उसके घर आए तो इतना ज़ेवर ले आए कि उस पर ज़कात वाजिबुल-अदा हो और बीवी शौहर के ये हालात जानते हुए भी कि वह क़र्ज़ में डूबा है और उसकी इतनी तन्ख़्वाह बहरहाल नहीं है कि वह ज़कात की रक़म निकाल सके तो क्या शौहर पर बग़ैर बीवी की तरफ़ से किसी क़ुरबानी के ज़कात व क़ुरबानी वाजिब रहेगी? और अल्लाह मियाँ शौहर ही का गिरेबान पकड़ेंगे? और क्या बीवी साहिबा यह कहकर छूट जाएँगी कि शौहर ही उनके आक़ा हैं और उन्हीं से सवाल व जवाब किए जाएँ।

जवाबः चूँकि ज़ेवर बीवी की मिल्कियत हैं इसलिए क़ुरबानी व ज़कात का मुतालबा भी उसी से होगा, और अगर वह अदा नहीं करती तो गुनाहगार भी वही होगी, शौहर से उसका मुतालबा नहीं होगा।

शौहर और बीवी की ज़कात का हिसाब अलग-अलग है

सवालः शादी पर लड़कियों को जो ज़ेवरात मिलते हैं वे उनकी मिल्कियत होते हैं, लेकिन वे ज़कात अपने शौहरों की कमाई हुई रक़म से अदा करती हैं, तो क्या इस सूरत में अगर शौहरों के पास भी कुछ रक़म हो लेकिन निसाब से वह कम हो तो उस रक़म को बीवियों के ज़ेवरात की मालियत में शामिल करके ज़कात दी जा सकती है? या दोनों का हिसाब अलग-अलग होगा?

जवाबः दोनों का अलग-अलग हिसाब होगा।

शौहर बीवी के ज़ेवर की ज़कात अदा कर सकता है

सवालः मैंने शादी के वक़्त अपनी बीवी को मेहर की अदायेगी में 13 तोले सोना दिया था, क्या यह जायज़ है? और 3 तोले सोना वह अपने मैके से लाई थीं, चुनाँचे कुल सोना 16 तोले पड़ा, अब मेरी बीवी अगर ज़कात 16 तोले पर नहीं दे सकती तो क्या उसकी यह ज़कात मैं अपने ख़र्च से दे सकता हूँ। याद रहे कि यह माल मेहर के तौर पर मैंने ही अदा किया था।

जवाबः चूँकि सोना आपकी बीवी की मिल्कियत में है इसलिए उसकी ज़कात तो उसी के ज़िम्मे है, लेकिन अगर आप उसके कहने पर उसकी तरफ़ से ज़कात अदा कर दें तो

अदा हो जाएगी।

ज़ेवर की ज़कात किस पर होगी?

सवालः मेरे पास आठ तोले सोना है जो कि पिछले साल शादी पर मिला था, और वह मेरी बीवी की मिल्कियत में है, इसके साथ-साथ मुझ पर क़र्ज़ा भी है, इस सूरत में उन ज़ेवरात की ज़कात मुझ पर होगी या बीवी पर?

(2) ज़ेवरात पर ज़कात जबकि आमदनी का ज़रिया मैं ही हूँ क़र्ज़ की रक़म निकाल कर अदा की जाए या सिर्फ़ ज़ेवरात की रक़म पर अदा की जाए?

जवाबः (1) जब ज़ेवरात आपकी बीवी की मिल्कियत हैं तो ज़कात भी उसी के ज़िम्मे है।

(2) ज़ेवर आपकी बीवी का है और क़र्ज़ आपके ज़िम्मे है, इस लिए ज़कात अदा करते वक़्त उस क़र्ज़ को कम नहीं किया जाएगा, बल्कि पूरे ज़ेवर की ज़कात अदा करेगी, अलबत्ता अगर आपकी बीवी के ज़िम्मे क़र्ज़ हो तो क़र्ज़ उसमें से कम किया जाएगा।

मरहूम शौहर की ज़कात बीवी पर फ़र्ज़ नहीं

सवालः अगर किसी का शौहर मर गया हो और मियाँ बीवी ने अपनी ज़िन्दगी में कभी ज़कात न दी हो मगर ख़ैरात बराबर करते रहे हों, तो क्या अब इस बेवा का फ़र्ज़ है कि वह गुज़रे दिनों की ज़कात अदा करे?

जवाबः मरहूम शौहर की ज़कात बेवा के ज़िम्मे फ़र्ज़ नहीं, उसके मरहूम शौहर की ज़िम्मे है, वही गुनाहगार होगा, उसकी

तरफ़ से वारिस अदा कर दें तो अच्छा है।

सवालः और क्या अपनी भी ज़कात वह मरने तक देती रहे, जबकि उसका ज़रिया-ए-आमदनी कोई नहीं?

जवाबः अगर उसकी अपनी मिल्कियत साढ़े बावन तोले चाँदी की मालियत है तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ है, यानी उसके अपने हिस्से की मालियत इतनी हो (अगर मरहूम के बच्चे यतीम हों तो उनके माल की ज़कात नहीं)।

ज़ेवर की ज़कात और उस पर विरासत का हक़

सवालः ज़ेवर की ज़कात किसको देनी होगी? मेरी बीवी अपने दहेज में दस तोला सोने के ज़ेवरात लाई थी, जो अब तक वह इस्तेमाल कर रही है। मेरी शादी को 5 साल गुज़र चुके हैं, मेरे घर जब से आई है एक पैसा भी उसने ज़कात नहीं दिया है, ज़ेवर वह पहनती ज़रूर है लेकिन मैं उसका हक़दार नहीं हूँ और न ही मैं उस पर अपना कोई हक़ समझता हूँ। मरने के बाद यह हक़ उसने अपने बेटे को दे दिया है वह जिस तरह चाहे उसे इस्तेमाल करे, मेरे बेटे की उम्र इस वक़्त चार साल है, अब आप मुझे तफ़सील से यह बताएँ कि उस ज़ेवर की ज़कात किसको अदा करनी चाहिए?

जवाबः उस ज़ेवर की ज़कात आपकी बीवी के ज़िम्मे है, उनसे कहिये कि अगर उनके पास पैसे नहीं तो ज़ेवर बेचकर पाँच साल की ज़कात अदा करें और मरने के बाद बेटे को हक़दार बनाना भी शरअ़न ग़लत है, उसके मरने के वक़्त जितने वारिस होंगे हिस्सा उसमें सब का होगा।

बेटी के लिए ज़ेवर पर ज़कात

सवालः मैं ज़कात के बारे में कुछ ज़्यादा मोहतात (एहतियात करने वाली) हूँ इसलिए इस फ़र्ज़ को बाक़ायदगी के साथ अदा करती हूँ। तो क़िब्ला! मैंने लोगों की ज़बानी सुना है कि "माँ अगर अपना ज़ेवर अपनी लड़की के लिए उठा रखे या यह नीयत करे कि यह सोना मैं अपनी बेटी को दहेज में दूँगी तो उस पर ज़कात वाजिब नहीं होती, और जब यह ज़ेवर या सोना लड़की को मिले तो वह उसको पहन कर या इस्तेमाल में लाकर ज़कात अदा करे। आप यह वज़ाहत करें कि लड़की के लिए कोई ज़ेवर बनवाकर रखा जाए तो ज़कात दी जाए या नहीं?

जवाबः अगर लड़की को ज़ेवर की मालिक बना दिया तो जब तक वह लड़की नाबालिग़ है उस पर ज़कात नहीं, बालिग़ होने के बाद लड़की के ज़िम्मे ज़कात वाजिब होगी, जबकि सिर्फ़ यह ज़ेवर या उसके साथ कुछ नक़दी निसाब की मिक़दार को पहुँच जाए। सिर्फ़ यह नीयत करने से कि यह ज़ेवर लड़की के दहेज में दिया जाएगा ज़कात से बाहर नहीं क़रार दिया जा सकता, ज़ब तक कि लड़की को उसका मालिक न बना दिया जाए, और लड़की को मालिक बना देने के बाद फिर उस ज़ेवर को ख़ुद पहनना जायज़ नहीं होगा।

गुज़रे सालों की ज़ेवर की ज़कात

सवालः मेरी शादी को नौ साल हो गए हैं। मेरी बेगम के पास जब से अब तक तक़रीबन 80 तोले सोना है, और हमने

अभी तक उस पर ज़कात अदा नहीं की, क्योंकि मेरी आमदनी इतनी नहीं कि कुछ बच जाए तो ज़कात अदा करूँ। मेरी दो बच्चियाँ भी हैं। वह सोना मेरी बीवी को दहेज में मिला था, अगर अब मैं ज़कात अदा करना चाहूँ तो कैसे अदा करूँ? क्या मुझ पर या मेरी बेगम पर ज़कात ज़रूरी है जबकि इतनी आमदनी नहीं?

जवाबः इस अस्सी तोले की ज़कात आपके ज़िम्मे नहीं बल्कि आपकी बीवी के ज़िम्मे है। अगर ज़कात अदा करने के पैसे न हों तो उतना हिस्सा ज़ेवर का दे दिया जाए। बहरहाल गुज़रे नौ सालों की ज़कात आपकी बीवी के ज़िम्मे है। हर साल का हिसाब करके जितनी ज़कात बनती है अदा की जाए।

निसाब में व्यक्तिगत मिल्कियत का एतिबार है

सवालः किसी घर में तीन भाई इकट्ठे रहते हैं, एक ही जगह खाते हैं लेकिन कमाते अलग हैं, हर एक की बीवी के पास ढाई या तीन तोले सोना है और सबका मिलाकर तक़रीबन साढ़े आठ तोले सोना बनता है, तो क्या उनको उस ज़ेवर की ज़कात अदा करनी होगी?

जवाबः अगर उनके पास और कोई माल नहीं जिस पर ज़कात फ़र्ज़ हो और वह निसाब की हद को पहुँचता हो, तो उन पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं, क्योंकि ज़कात के निसाब में व्यक्तिगत मिल्कियत का एतिबार है, और यहाँ किसी की इन्फ़िरादी (व्यक्तिगत) मिल्कियत ज़कात के निसाब के बराबर नहीं।

ख़ानदान की सामूहिक ज़कात

सवालः एक ख़ानदान के चन्द अफ़राद जो रोज़गार पर लगे हैं, उनकी अपनी मिल्कियत में इतना माल नहीं कि जिस पर ज़कात दें, लेकिन अगर सब अपना माल जमा कर लें तो वह निसाब के मुताबिक़ क़ाबिले ज़कात बन जाता है, इस सिलसिले में क्या हुक्म है? ज़कात किस हिसाब से निकाली जाए?

जवाबः हर शख़्स का अलग-अलग साहिबे निसाब होना शर्त है, वरना ज़कात फ़र्ज़ नहीं होती। इसलिए आपने जो सूरत लिखी है उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं। अलबत्ता अगर उर्फ़ में सारी मिल्कियत ख़ानदान के मुखिया की समझी जाती है, चूँकि यह एक फ़र्द की मिल्कियत हुई और निसाब के बराबर भी है, तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ होगी। यह उस सूरत में है कि ख़ानदान के मुखिया को वास्तव में मालिक समझा भी जाता हो।

मुश्तरका घरदारी में ज़कात कब वाजिब होगी

सवालः हमारे घर में यह तरीक़ा है कि सब भाई तन्ख़्वाह लाकर वालिदा को देते हैं, जो घर का ख़र्चा चलाती हैं। जबकि ज़ेवर और कुछ बचत की रक़म हमारे पास होती है। आया ज़कात देनी हमारे ज़िम्मे है या वालिदा (माँ) के?

जवाबः अगर वह सोना और बचत की रक़म इतनी हो कि अगर उसको तक़सीम किया जाए तो सब भाई साहिबे निसाब (यानी शरीअ़त के हिसाब से मालदार) हो सकते हैं तो

ज़कात वाजिब है, वरना नहीं।

मुश्तरका ख़ानदान में बीवी, बेटी, बहुओं की ज़कात किस तरह दी जाए

सवालः मैं घर का मुखिया हूँ। मेरे दोनों लड़के रोज़गार पर लगे हैं और मेरी दोनों बहुओं के यहाँ कम से कम 12-12 तोले हर एक के पास ज़ेवरात हैं और बीवी के पास 5 तोले के ज़ेवर और कुंवारी लड़की की शादी के लिए 3 तोले के ज़ेवरात हैं, जिसको एक साल से ख़रीद कर रखा हुआ है। दूसरे आजकल मुश्तरका (संयुक्त) ख़ानदान में भी ज़ेवर हर संबन्धित औरत की ज़ाती मिल्कियत ही शुमार होता है, एक औरत का ज़ेवर दूसरी औरत मुस्तक़िल तौर से नहीं ले सकती, यहाँ तक कि सास अपनी बहू का ज़ेवर अपनी लड़की को नहीं दे सकती। ऐसी सूरत में मुझे घर के तमाम ज़ेवर की मालियत के मुताबिक़ ज़कात निकालनी चाहिए या अलग-अलग हर एक के हिस्से के हिसाब से?

जवाबः ज़कात के वाजिब होने में हर शख़्स की इन्फ़िरादी (व्यक्तिगत) मिल्कियत का एतिबार है। अब आपकी बहुओं के पास जो ज़ेवर है देखना यह है कि उसका मालिक कौन है? आपकी बहुओं का ज़ेवर अगर उनकी मिल्कियत है तो ज़कात उनके ज़िम्मे वाजिब है, और अगर लड़कों की मिल्कियत है तो ज़कात उनके ज़िम्मे वाजिब है, और अगर कुछ ज़ेवर बहुओं की मिल्कियत है जैसे जो ज़ेवर उनके मैके से मिला है और कुछ लड़कों की तो अगर हर एक की मिल्कियत निसाब को पहुँचती है तो ज़कात वाजिब है, वरना नहीं।

इसी तरह आपकी बीवी के पास जो सोना है वह अगर उसकी मालिक हैं और उसके सिवा उनकी मिल्कियत में कोई रुपया पैसा नहीं तो उनके ज़िम्मे ज़कात नहीं, और अगर वह सोना आपकी मिल्कियत है तो दूसरे ज़कात के मालों के साथ इस ज़ेवर की ज़कात भी आपके ज़िम्मे होगी।

आपने लड़की के लिए जो सोना ख़रीद करके रखा हुआ है, उसके बारे में भी यह देखा जायेगा कि आपने वह सोना लड़की की मिल्कियत कर दिया है या नहीं? अगर लड़की की मिल्कियत नहीं तो उसकी ज़कात आपके ज़िम्मे है, और अगर लड़की की मिल्कियत है और उसके पास कोई नक़द रुपया पैसा नहीं तो उस पर ज़कात नहीं। और अगर कुछ रुपया पैसा भी उसके पास है तो ज़कात उसके ज़िम्मे वाजिब है।

साझे के कारोबार की ज़कात किस तरह अदा की जाएगी

सवालः मेरा एक दोस्त है, उसको उसके भाई ने छह हज़ार रुपये में खिलौनों की दुकान खोलकर दी है। अब उसकी ज़कात कौन अदा करेगा, जबकि यह कारोबार साझे में हो गया। यानी रक़म एक भाई की है और चलाता दूसरा भाई है, नफ़ा बराबर है। उस आदमी ने जिसने यह दुकान खोली है एक प्लाट दुकान के लिये दस हज़ार रुपये में ख़रीदा है, अब उसकी ज़कात की क्या शक्ल होगी?

जवाबः पहले यह समझ लीजिए कि जब किसी को कारोबार के लिए माल दिया जाए और नफ़े में हिस्सा रखा

जाए तो शरई इस्तिलाह में इसको "मुज़ारबत" कहते हैं। और हमारे यहाँ आ़म तौर से इसको "शराकत" (पार्टनरशिप) कह दिया जाता है। जबकि आपने भी यही लफ़्ज़ इस्तेमाल किया है, इस कारोबार में एक असल रक़म होती है और एक उसका मुनाफ़ा, असल रक़म की ज़कात उसके असल मालिक के ज़िम्मे है और उसके ज़िम्मे मुनाफ़ा के उस हिस्से की ज़कात भी वाजिब है जो उसे मिलेगा, और जो नफ़े पर काम करता है अगर उसका नफ़ा निसाब की मिक़दार को पहुँचे और उस पर साल भी गुज़र जाए तो अपने हिस्से की ज़कात उस पर भी होगी। जो प्लाट दुकान के लिए ख़रीदा है उस पर ज़कात नहीं, खिलौने अगर मुजस्समों (तस्वीरों) की शक्ल के हों तो उनका कारोबार दुरुस्त नहीं।

क़र्ज़ की ज़कात किसके ज़िम्मे है

सवालः दस महीने पहले राशिद ने ख़ालिद को बीस हज़ार रुपये क़र्ज़ के तौर पर दिये, अदायेगी की मुद्दत मुतैयन नहीं है, ख़ालिद ने दस हज़ार रुपये मकान ख़रीदने में और दस हज़ार रुपये कारोबार में लगाए। रक़म मुनाफ़े के साथ अब दस हज़ार रुपये से बढ़कर तेरह हज़ार रुपये हो गई है। क्या इस सूरत में ज़कात वाजिब हो गई? और अगर हो गई तो किस सूरत में?

जवाबः उसूल यह है कि जो रक़म किसी को क़र्ज़ के तौर पर दी जाए उसकी ज़कात क़र्ज़ देने वाले के ज़िम्मे होती है, क़र्ज़ लेने वाले के ज़िम्मे नहीं होती। पस राशिद ने जो बीस हज़ार की रक़म ख़ालिद को क़र्ज़ दे रखी है उसकी ज़कात

राशिद के ज़िम्मे है।

ख़ालिद के पास जो सरमाया है चाहे वह कारोबार में लगा हुआ हो या सोने चाँदी और नक़दी की शक्ल में उसके पास मौजूद हो, उस तमाम सरमाये की मजमूई रक़म में से बीस हज़ार रुपये निकाल दिये जाएँ जो उसके ज़िम्मे क़र्ज़ हैं, बाक़ी सरमाया अगर साढ़े बावन तोले चाँदी की मालियत के बराबर है तो उसके ज़िम्मे उसकी ज़कात वाजिब है।

सवालः अगर कुछ रक़म किसी को क़र्ज़ दी हुई हो तो क्या उस रक़म पर ज़कात देनी होगी?

जवाबः जी हाँ! उस रक़म पर भी हर साल ज़कात वाजिब है, अलबत्ता आपको यह इख़्तियार है कि हर साल जब दूसरे माल की ज़कात देते हैं उसी के साथ क़र्ज़ पर दी हुई रक़म की ज़कात दिया करें, और यह भी इख़्तियार है कि जब क़र्ज़ वुसूल हो जाए तो पिछले तमाम सालों की ज़कात जो उस क़र्ज़ की रक़म पर वाजिब हुई थी, वह एक-मुश्त अदा कर दें।

सवालः मेरे वालिदैन (माँ-बाप) ने अपने मकान की तामीर के सिलसिले में बीस हज़ार रुपये क़र्ज़ लिये थे जो अभी लौटाये नहीं गये हैं। अगरचे वह रक़म हमारे पास जमा शुदा नहीं है बल्कि मकान की तामीर वग़ैरह के सिलसिले में ख़र्च हो गई, तो क्या हम पर उसकी ज़कात देनी फ़र्ज़ होगी? क्योंकि इस सिलसिले में मालूम करने पर हमें यह बात मालूम हुई कि जिस शख़्स की रक़म होगी वही ज़कात अदा करने का ज़िम्मेदार होगा। इस सिलसिले में हमने उस शख़्स से भी मालूम किया जिसकी यह रक़म है, तो उन्होंने साफ़ तौर पर ज़कात अदा करने से इनकार किया और कहा कि ज़कात

आप खुद अदा करें क्योंकि यह रक़म आपके काम आई है।

जवाबः क़र्ज़ की रक़म की ज़कात क़र्ज़ देने वाले के ज़िम्मे होती है, क़र्ज़ लेने वाले के ज़िम्मे नहीं होती। इसलिए उस रक़म की ज़कात आप लोगों के ज़िम्मे नहीं, क़र्ज़ देने वाले को चाहिए कि उसकी ज़कात अदा करे।

ना-दहन्दा क़र्ज़दार को दी गई क़र्ज़ की रक़म पर ज़कात

सवालः मुझसे अ़र्सा चार-पाँच साल हुए अपने ही दोस्तों या रिश्तेदारों ने कुछ रक़म उधार ली थी, जिसके वापस देने की न कोई मुद्दत तय हुई और न कोई तहरीर लिखी गई थी। मैंने इस अ़र्से में कितनी ही बार पैसों की वापसी का मुतालबा किया, तो जवाब मिला कि क्या हुआ दे देंगे, ऐसे ही होते-होते 5 साल गुज़र गए हैं, लेकिन पैसे वापस मिलने की कोई उम्मीद पुख़्ता नज़र नहीं आती है। हो सकता है कि अभी और ज़्यादा अ़र्सा गुज़र जाए, ना-उम्मीद होकर मैंने भी पैसे माँगने छोड़ दिए हैं। बराहे मेहरबानी आगाह फ़रमाएँ कि उस रक़म की ज़कात जो अ़र्सा 5 साल से मेरे पास नहीं, देनी होगी या नहीं?

जवाबः जो रक़म किसी को क़र्ज़ दी हो उस पर ज़कात लाज़िम है, अलबत्ता यह इख़्तियार है कि चाहे तो हर साल अदा कर दिया करे या वुसूल होने के बाद पिछले तमाम सालों की ज़कात एक-मुश्त अदा कर दे। लेकिन अगर क़र्ज़ लेने वाला क़र्ज़े का इनकारी हो और क़र्ज़ देने वाले के पास गवाह

भी न हों तो वुसूली होने से पहले उसकी ज़कात लाज़िम नहीं, और वुसूल होने के बाद भी पिछले सालों की ज़कात नहीं।

सवालः मेरे एक दोस्त ने आज से पाँच साल पहले डेढ़ लाख रुपये कारोबार में लगाने के लिए लिये थे, उसने वह तमाम रुपया खुर्द-बुर्द कर दिया। आज पाँच साल के बाद उसने मुझे पन्द्रह हज़ार रुपया वापस किया है। क्या उन पन्द्रह हज़ार रुपये पर ज़कात वाजिब है? क्या पाँच साल की ज़कात अदा करनी चाहिए या सिर्फ़ इसी साल की? और जो बाक़ी का रुपया उसने अदा नहीं किया उस पर भी ज़कात अदा करनी चाहिए या नहीं?

जवाबः उस पन्द्रह हज़ार रुपये पर पिछले तमाम सालों की ज़कात वाजिब है, इसी तरह जो रुपया आपके दोस्त से मिलता जाए उसकी गुज़िश्ता सालों की ज़कात अदा करते रहिये।

अमानत की रक़म पर ज़कात

सवालः मेरे पास किसी की अमानत है तो उस पर ज़कात देना मेरा फ़र्ज़ है या जिसकी रक़म है वह ज़कात देगा? दूसरी बात अर्ज़े ख़िदमत यह है कि मुझसे किसी ने क़र्ज़ माँगा और वह अपने वक़्त पर न दे, और उम्मीद भी कम है तो उस रक़म पर भी ज़कात फ़र्ज़ है या नहीं?

जवाबः जिस शख़्स की अमानत आपके पास है, आपके ज़िम्मे उसकी ज़कात नहीं, क्योंकि उसकी ज़कात अमानत रखवाने वाले के ज़िम्मे लाज़िम है। अगर उसने आपको ज़कात देने का इख़्तियार दिया है तो आप भी उस रक़म में से अदा

कर सकते हैं। किसी के ज़िम्मे जो आपका क़र्ज़ है अगर वह क़बूल करता है कि मुझे क़र्ज़ देना है तो आपके ज़िम्मे उसकी ज़कात लाज़िम है, चाहे हर साल अदा करते रहें या जब वुसूल हो जाए तब पिछले तमाम सालों की अदा करें।

अगर अमानत की रक़म से हुकूमत ज़कात काट ले तो?

सवालः दूसरे शहरों के लोग अपनी तिजारत (कारोबार) और अमानत के तौर पर किसी के पास जो रक़म जमा कराते हैं तो हिफ़ाज़त के ख़्याल से वह शख़्स अपने नाम से उसको बैंक में रख देता है, और वक़्त-वक़्त पर उन लोगों की हिदायत के मुताबिक़ रक़म निकालता भी रहता है, तो हुकूमत क्या उन रक़मों पर ज़कात काटने की हक़दार है या नहीं?

जवाबः जिस शख़्स की अमानत है उसके ज़िम्मे ज़कात फ़र्ज़ होगी, मगर चूँकि हुकूमत आपके एकाउन्ट से ज़बरदस्ती ज़कात काट लेती है, इसलिए अमानत रखने वालों को चाहिए कि आपको ज़कात अदा करने का इख़्तियार दे दें। इस इख़्तियार देने के बाद उनकी रक़म से जो ज़कात कटेगी वह उनकी तरफ़ से होगी और आप (ज़कात की रक़म जो काट ली गई) उसको कम करके बाक़ी रक़म उनको वापस करेंगे।

ज़मानत की रक़म की ज़कात

सवालः जो रक़म हमारे पास अमानत के तौर पर रखी हो उस पर ज़कात कौन अदा करेगा? हम अदा करेंगे या असली मालिक? मकान के किराये पर जो रक़म बतौर पेशगी ज़मानत

के तौर पर किरायेदार से ली जाती है वह क़ाबिले वापसी है, और कई साल मालिक मकान के पास अमानत रहती है, उस पर कौन ज़कात अदा करेगा?

जवाबः जो शख़्स रक़म का मालिक हो उसके ज़िम्मे ज़कात है। पस अमानत की रक़म की ज़कात अमीन पर नहीं बल्कि अमानत रखने वाले मालिक के ज़िम्मे है, और ज़रे ज़मानत का मालिक किरायेदार है, उसकी ज़कात भी उसी के ज़िम्मे है।

ज़कात का निसाब और शर्तें

ज़कात किन चीज़ों पर फ़र्ज़ है

सवालः ज़कात किस-किस चीज़ पर फ़र्ज़ है?

जवाबः ज़कात निम्नलिखित चीज़ों पर फ़र्ज़ हैः

1. सोना, जबकि साढ़े सात तोले (87.479 ग्राम) या इससे ज़्यादा हो।

2. चाँदी जबकि साढ़े बावन तोले (612.35 ग्राम) या इससे ज़्यादा हो।

3. रुपया, पैसा, और माले तिजारत जबकि उसकी मालियत साढ़े बावन तोले चाँदी (612.35 ग्राम) के बराबर हो।

नोटः अगर किसी के पास थोड़ा सा सोना है, कुछ चाँदी है, कुछ नक़द रुपये हैं, कुछ माले तिजारत है और उनकी मजमूई मालियत साढ़े बावन तोले (612.35 ग्राम) चाँदी के

बराबर है तो उस पर भी ज़कात फ़र्ज़ है। इसी तरह अगर कुछ सोना है, कुछ चाँदी है या कुछ सोना है कुछ नक़द रुपया है, या कुछ चाँदी है कुछ माले तिजारत है तब भी उनको मिलाकर देखा जाएगा कि साढ़े बावन तोले चाँदी की मालियत बनती है या नहीं, अगर बनती हो तो ज़कात वाजिब है, वरना नहीं। ग़र्ज़ यह कि सोना, चाँदी नक़दी, माले तिजारत में से दो चीज़ों की मालियत जब चाँदी के निसाब के बराबर हो तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ है।

4. इन चीज़ों के अ़लावा चरने वाले पशुओं पर भी ज़कात फ़र्ज़ है, और भेड़, बकरी, गाय, भैंस और ऊँट के अलग-अलग निसाब हैं, उनमें चूँकि तफ़सील ज़्यादा है इसलिए नहीं लिखता, जो लोग ऐसे मवेशी (पशु) रखते हों वे उलेमा से दरियाफ़्त करें।

5. उश्री ज़मीन की पैदावार पर भी ज़कात फ़र्ज़ है, जिसको उश्र कहा जाता है, इसकी तफ़सीलात आगे मुलाहिज़ा करें।

निसाब की एकमात्र शर्त क्या है?

सवालः आ़म तौर से ज़कात के लिए शर्ते निसाब जो सुनने में आता है, वह है साढ़े बावन तोले चाँदी या साढ़े सात तोले सोना, या उनकी मालियत है।

मसला यह है कि एक शख़्स जिसके पास न सोना है न चाँदी बल्कि पाँच हज़ार रुपये नक़द हैं, उसको किस निसाब पर अ़मल करना चाहिए? सोने पर या चाँदी पर? और मालियत का हिसाब लगाए तो किस चीज़ के मुताबिक़? अगर

चाँदी की शर्त पर अ़मल करता है तो वह साहिबे निसाब ठहरेगा, लेकिन अगर सोने की शर्त पर अ़मल करता है तो हरगिज़ साहिबे ज़कात नहीं ठहरता, लिहाज़ा वह ज़कात की अदायेगी का ज़िम्मेदार क़रार नहीं दिया जा सकता, वज़ाहत फ़रमाएँ कि ऐसे शख़्स को कौनसी राह इख़्तियार करनी चाहिए।

आजकल निसाब के दो मेयार क्यों चल रहे हैं, जबकि हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में तो एक ही मेयार था, यानी दो सौ दिर्हम (चाँदी) की मालियत बीस दीनार (सोने) की मालियत के बराबर थे, आज उनकी मालियतों में ज़मीन व आसमान का फ़र्क़ है, लिहाज़ा किस शर्त पर अ़मल करना लाज़िमी है? निसाब की वाहिद (एकमात्र) शर्त क्या है?

जवाबः आपके सवाल के सिलसिले में चन्द बातें समझ लेनी ज़रूरी हैं:

अव्वलः किस माल में कितनी मिक़दार (मात्रा) वाजिबुल-अदा है? किस माल में कितने निसाब पर ज़कात वाजिब होती है? यह बात महज़ अ़क़्ल व अन्दाज़े से मालूम नहीं हो सकती, बल्कि इसके लिए हमें नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इरशादात की तरफ़ रुजू करना लाज़िमी है। पस नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जिस माल का जो निसाब मुक़र्रर फ़रमाया है उसको क़ायम रखना ज़रूरी है, और उसमें रद्दोबदल की गुन्जाईश नहीं, ठीक उसी तरह जिस तरह कि नमाज़ की रक्अ़तों में रद्दोबदल की गुन्जाईश नहीं।

दूसरे: नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने चाँदी का निसाब दो सौ दिर्हम (यानी साढ़े बावन तोले यानी तक़रीबन 612.35 ग्राम) और सोने का निसाब बीस मिस्क़ाल (साढ़े सात तोले यानी तक़रीबन 87.5 ग्राम) मुक़र्रर फ़रमाया है, अब चाहे सोने चाँदी की क़ीमतों के बीच वह तनासुब (अनुपात) जो नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में था क़ायम रहे या न रहे, सोने चाँदी के इन निसाबों में तब्दीली करने का हमें कोई हक़ नहीं। जिस तरह फ़जर की नमाज़ में दो के बजाए चार रक्अ़तें और मग़रिब की नमाज़ में तीन के बजाए दो रक्अ़तें पढ़ने का कोई इख़्तियार नहीं।

तीसरे: जिसके पास नक़द रुपया पैसा हो या माले तिजारत हो, यह तो ज़ाहिर है कि उसके लिए सोने चाँदी में से किसी एक के निसाब को मेयार बनाना होगा, रहा यह कि चाँदी के निसाब को मेयार बनाया जाए या सोने के निसाब को? इसके लिए उम्मत के फ़ुक़हा ने जो दर हक़ीक़त हुक्मा-ए-उम्मत हैं, यह फ़ैसला दिया है कि इन दोनों में से जिसके साथ भी निसाब पूरा हो जाए उसी को मेयार बनाया जाएगा। मसलन् चाँदी की क़ीमत से निसाब पूरा हो जाता है, मगर सोने से निसाब पूरा नहीं होता (और यही आपके सवाल का बुनियादी नुक्ता है) तो चाँदी की क़ीमत से हिसाब लगाया जाएगा, और इसकी दो वजहें हैं- एक यह कि ज़कात फ़क़ीरों ग़रीबों के नफ़े के लिए है, और इसमें ग़रीबों का नफ़ा ज़्यादा है, दूसरे यह कि इसमें एहतियात भी ज़्यादा है कि जब एक नक़दी (यानी चाँदी) के साथ निसाब पूरा हो जाता है और दूसरी नक़दी (यानी सोने) के साथ पूरा नहीं होता तो

एहतियात का तक़ाज़ा यह होगा कि जिस नक़दी के साथ निसाब पूरा हो जाता है उसी का एतिबार किया जाएगा।

ज़कात कब वाजिब हुई

सवालः मेरे पास साल भर से कुछ रक़म थी जिसे मैं ख़र्च करती रही, शव्वाल के महीने से रजब तक मेरे पास दस हज़ार रुपये बचे और रजब में ही 35 हज़ार रुपये की आमदनी हुई, अब यह बताएँ कि रमज़ान में सिर्फ़ दस हज़ार की ज़कात निकालनी होगी या 35 हज़ार भी उसमें शामिल किए जाएँगे, जबकि 35 हज़ार पर रमज़ान तक सिर्फ़ तीन महीने का अर्सा (समय) गुज़रा होगा।

जवाबः जो आदमी एक बार निसाब का मालिक हो जाए जब उस निसाब पर एक साल गुज़रेगा तो साल के दौरान हासिल होने वाले कुल सरमाये पर ज़कात वाजिब होगी, हर रक़म पर अलग-अलग साल गुज़रना शर्त नहीं। इसलिए रमज़ान मुबारक में आप पर उस कुल रक़म की ज़कात वाजिब होगी जो उस वक़्त आपके पास हो।

सवालः अगर किसी के पास 68 हज़ार रुपये और 6 तोले सोना है तो उस सोने पर भी ज़कात दी जाएगी या सिर्फ़ रुपये की ही ज़कात निकालनी होगी?

जवाबः इस सूरत में ज़कात सोने पर भी वाजिब है, साल पूरा होने के दिन सोने की जो क़ीमत हो उसके हिसाब से 6 तोले सोने की मालियत को भी रक़म में शामिल करके ज़कात अदा की जाए।

नक़द और तिजारत के माल के लिए चाँदी का निसाब मेयार है

सवालः निसाब साढ़े सात तोले सोना, साढ़े बावन तोले चाँदी का है, इस सिलसिले में जानना चाहूँगा कि नक़दी और माल का हिसाब किसके मेयार पर किया जाए? चाँदी या सोने के?

जवाबः चाँदी के निसाब का एतिबार किया जाए।

नोटः सोढ़ सात तोले सोना बराबर है 87.479 ग्राम के, और साढ़े बावन तोले चाँदी 612.35 ग्राम के बराबर है।

सवालः आजकल कम से कम कितनी रक़म की मिल्कियत पर ज़कात फ़र्ज़ होगी?

जवाबः साढ़े बावन तोले चाँदी की बाज़ार में जितनी क़ीमत हो उतनी मालियत पर, चूँकि चाँदी का भाव बदलता रहता है इसलिए उसकी मालियत का लिखना बेफ़ायदा है, जिस दिन ज़कात वाजिब हो उस दिन की क़ीमत का एतिबार है ।

निसाब से कम अगर केवल सोना हो तो ज़कात वाजिब नहीं

सवालः अगर किसी औरत के पास साढ़े सात तोले सोना और साढ़े बावन तोले चाँदी हो तो उस पर ज़कात वाजिब है, इससे कम पर ज़कात वाजिब नहीं। अगर किसी औरत के पास 5-6 तोला सोना हो चाँदी और नक़दी वग़ैरह कुछ न हो

और वह ज़कात नहीं देती, यह सही है या नहीं?

जवाबः अगर सिर्फ़ सोना हो, उसके साथ चाँदी या नक़दी रुपया और दीगर कोई चीज़ क़ाबिले ज़कात न हो तो साढ़े सात तोले (87.5 ग्राम) से कम सोने पर ज़कात नहीं।

साढ़े सात तोले सोने से कम पर नक़दी मिलकर ज़कात वाजिब है

सवालः मेरी चार लड़कियाँ बालिग़ हैं, हर एक के पास 4 तोले सोना ज़ायद या कम है, मैंने हमेशा के लिए दे दिया था और हर एक के पास रुपया चार सौ रियाल, छह सौ, एक हज़ार रियाल जमा रहता है, क्या उन सब पर ज़कात, क़ुरबानी फ़ित्रा अलग-अलग अदा करना वाजिब है या नहीं?

जवाबः आपने जो सूरत लिखी है उसमें आपकी सब लड़कियों पर अलग-अलग ज़कात, क़ुरबानी और सदक़ा-ए-फ़ित्र लाज़िम है। क्योंकि सोना अगरचे निसाब से कम है मगर नक़दी के साथ सोने की क़ीमत मिलाई जाए तो साढ़े बावन तोले (612.35 ग्राम) चाँदी की क़ीमत बन जाती है।

क्या निसाब से ज़ायद में निसाब के पाँचवे हिस्से तक छूट है?

सवालः मेरे पास सिर्फ़ सोने के तीन ज़ेवरात हैं एक का वज़न 78 तोला, दूसरे का 2 तोला, तीसरे का एक तोला 5 माशे, कुल 81 तोले 5 माशे के ज़ेवरात हैं। मैं चाहता हूँ कि

सिर्फ़ चालीसवें हिस्से की दर से दो तोले की ज़कात निकाल दूँ और वह इस तरह कि दो तोले का एक ज़ेवर ही अपनी ग़रीब फूफी को दे दूँ। क्या ऐसा हो सकता है? कुछ लोग कहते हैं कि 17 माशे पर ज़कात माफ़ है, क्योंकि निसाब के पाँचवे हिस्से से कम है, मगर एक साहिब फ़रमाते हैं कि मौजूदा ज़माने में ढाई फ़ीसद की दर ज़कात की हो गई है, चालीसवें की इस्तिलाह मन्सूख़ (निरस्त और ख़त्म) हो गई, अब मुझको ढाई फ़ीसद के हिसाब से कुल नौ सौ सत्तर माशे का ढाई फ़ीसद यानी 24.425 माशे देना होगा, न कि सिर्फ़ 24 माशे, यानी 2 तोला। यह उलझन दूर फ़रमायें।

जवाबः ढाई फ़ीसद और चालीसवाँ हिस्सा तो एक ही चीज़ है, इस्तिलाहें बदलती रहती हैं, मन्सूख़ नहीं हुआ करतीं। दर असल इस मसले में हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रह0 और साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद रह0) का मतभेद है कि निसाब से रक़म कुछ ज़्यादा हो तो ज़ायद पर ज़कात है या नहीं? हज़रत इमाम साहिब के नज़दीक निसाब से ज़ायद जब पाँचवाँ हिस्सा हो जाए तो उस पर ज़कात है, निसाब और पाँचवे हिस्से के बीच की मालियत पर "छूट" है। इसी तरह पाँचवे हिस्से से पाँचवे हिस्से तक "छूट" है, जब और पाँचवाँ हिस्सा हो जाएगा उस पर ज़कात आएगी।

साहिबैन रहमतुल्लाहि अ़लैहिमा फ़रमाते हैं कि निसाब से ज़ायद जितनी भी मालियत हो चाहे कम या ज़्यादा, उस पर ज़कात है। पस हज़रत इमाम रह0 के क़ौल के मुताबिक़ आपके ज़िम्मे सिर्फ़ अस्सी तोले पर ज़कात है, और ज़ायद मात्रा जो सत्तर माशे की है, वह चूँकि निसाब के पाँचवे हिस्से

से कम है, उस पर ज़कात नहीं, जबकि साहिबैन रह0 के नज़दीक उस ज़ायद सत्तर माशे पर भी उसके हिसाब से ज़कात है। अवाम के लिए ज़्यादा बारीकी में जाना मुश्किल है, उनके लिए सीधी सी बात यह है कि कुल मालियत पर चालीसवाँ हिस्सा (या ढाई फ़ीसद) अदा कर दिया करें। लिहाज़ा आप दो तोले अपनी फूफी साहिबा को दे दें यह अस्सी तोले की ज़कात हो गई, और एक तोला 5 माशे जो ज़ायद है उसकी क़ीमत लगाकर उसका चालीसवाँ हिस्सा अदा कर दें।

एक और सवाल

सवालः मैं बुज़ुर्गों से सुनता चला आ रहा हूँ और किताबों में पढ़ता हूँ कि ज़कात चाँदी सोने पर है, अगर किसी के पास रुपये हों या नोट हों तो उनका भी चाँदी सोने में हिसाब कर लो, अब फिर देखो साढ़े बावन तोले चाँदी या साढ़े सात तोले सोने के बराबर हुए कि नहीं, अगर हो गए तो साहिबे निसाब हो गए और अब उसका चालीसवाँ हिस्सा ज़कात निकाल दो। यानी चालीस से तक़सीम कर दो। और अगर बाक़ी कुछ बच जाए तो अगर वह निसाब के पाँचवे हिस्से से कम है तो उसको छोड़ दो, उस पर ज़कात माफ़ है।

मेरे पास मिसाल के तौर पर 20 तोले चाँदी के ज़ेवरात हैं और 450 रुपये बैंक में हैं जिन पर एक साल मुकम्मल गुज़र गया, अब 450 रुपये को मैंने नौ तोले चाँदी 50 रुपये फ़ी तोले से बना लिया, गोया मेरे पास कुल एक सौ उन्तीस तोले चाँदी या कुल छह हज़ार चार सौ पचास रुपये नक़दी हैं, अगर

मैं सिर्फ़ उनको चाँदी समझ कर चालीसवाँ हिस्सा निकालता हूँ तो सिर्फ़ तीन तोले चाँदी यानी एक सौ पचास रुपये ज़कात वाजिब है। 9 तोले बढ़ोतरी पर जो निसाब के पाँचवे हिस्से से कम है ज़कात वाजिब नहीं। अगर मैं दूसरे तरीक़े से यानी 6450 रुपये पर ढाई फ़ीसद के हिसाब से निकालता हूँ तो उस पर 161 रुपये 25 पैसे ज़कात आएगी। बताईये कि कौनसी रक़म 150 रुपये या 161 रुपये 25 पैसे सही हैं? मेरी इस उलझन को दूर फ़रमाएँ।

जवाबः जो सोना चाँदी निसाब से ज़ायद हो मगर निसाब के पाँचवे हिस्से से कम हो उसमें ज़कात वाजिब होने या न होने में इख़्तिलाफ़ (मतभेद) है, एहतियात की बात यही है कि उसको भी वाजिब समझ कर अदा किया जाए। इसलिए आपकी ज़िक्र की हुई मिसाल में 161 रुपये 25 पैसे ही अदा करने चाहिएँ।

निसाब से ज़्यादा सोने की ज़कात

सवालः अगर किसी शख़्स के पास निसाब से ज़्यादा सोना है तो इस सूरत में क्या ज़कात पूरी मिक़दार पर फ़र्ज़ है या निसाब से ज़ायद मिक़दार पर?

जवाबः पूरी मिक़दार पर, बाज़ लोग ज़कात को इन्कम टैक्स पर क़ियास (अन्दाज़ा) करके यह समझते हैं कि निसाब से कम मिक़दार (मात्रा) पर ज़कात नहीं, इसलिए जब निसाब से ज़्यादा हो जाए तो सिर्फ़ ज़ायद पर ज़कात है और निसाब की मिक़दार "छूट" में दाख़िल है, मगर यह ख़्याल सही नहीं बल्कि जितना भी सोना चाँदी या रुपया पैसा हो उस सबकी

ज़कात लाज़िम है, जबकि निसाब को पहुँच जाए।

नोट पर ज़कात

सवालः इस ज़माने में तमाम मुल्कों में सिक्के के बजाए काग़ज़ी नोट राईज (चलते) हैं, जिनकी हैसियत वादे या इक़रार-नामे की है, क्या यह काग़ज़ी नोट सिक्के में शुमार हो सकता है? अगर सिक्के में शुमार नहीं हो सकता तो उस पर ज़कात भी वाजिब नहीं, क्योंकि अल्लाह तआला ने फ़िलिज़्ज़ी (यानी धातु जैसे सोने-चाँदी वग़ैरह) सिक्का राईजुल-वक़्त पर ज़कात लाज़िम की है।

जवाबः नोट या तो खुद सिक्का है या मालियत की रसीद है, इसलिए ज़कात नोटों पर हर हाल में लाज़िम है, अलबत्ता नोट से ज़कात अदा होने का मसला विचारनीय रहा है, बहुत से अकाबिर की राय में यह खुद सिक्का नहीं बल्कि रसीद है, इसलिए ज़कात इससे आद नहीं होती, और बाज़ उलेमा के नज़दीक इसको नये दौर में सिक्के की हैसियत हासिल है इसलिए ज़कात अदा हो जाती है, पहले क़ौल पर एहतियात ज़्यादा है और दूसरे क़ौल में सहूलत ज़्यादा है।

ज़कात बचत की रक़म पर होती है, तन्ख़्वाह पर नहीं

सवालः फ़ौजी सिपाही को तन्ख़्वाह मिलती है उसके साथ मकान का किराया, ट्रांसपोर्ट का किराया वग़ैरह मिलता है, 1300 रुपये तक नक़द ले लेते हैं। क्या इस रक़म पर ज़कात है? जबकि रुपये इकट्ठे उसके पास आते हैं, लेकिन बड़ी

मुश्किल से गुज़ारा होता है।

जवाबः ज़कात बचत की रक़म पर होती है, जबकि बचत की रक़म साढ़े बावन तोले यानी 612.35 ग्राम चाँदी की मालियत को पहुँच जाए। जब कुछ बचता ही नहीं तो उस पर ज़कात क्या होगी।

ज़कात माहाना तन्ख़्वाह पर नहीं बल्कि बचत पर साल गुज़र जाने पर है

सवालः अपनी तन्ख़्वाह की कितनी फ़ीसद रक़म ज़कात में देनी चाहिए? हमारी कुल तन्ख़्वाह सिर्फ़ पाँच सौ है।

जवाबः अगर बचत निसाब के बराबर हो जाए और उस पर साल भी गुज़र जाए तो ढाई फ़ीसद ज़कात वाजिब है, वरना नहीं।

तन्ख़्वाह की रक़म जब तक वुसूल न हो उस पर ज़कात नहीं

सवालः मैं जिस कम्पनी में काम करता हूँ उस कम्पनी पर मेरी कुछ रक़म (तन्ख़्वाह की मद में) वाजिब है, मौजूदा ज़ाहिरी सूरतेहाल के मुताबिक़ उसके मिलने की कोई ख़ास उम्मीद नहीं है, लेकिन अगर अल्लाह पाक के फ़ज़्ल व करम से यह रक़म मिल जाती है तो मेरा इरादा है कि उससे अपनी ज़ाती ज़रूरत के लिए एक मकान या फ़्लेट ख़रीद लूँ (मेरे पास अपना ज़ाती मकान नहीं है), क्या मुझे उस रक़म पर ज़कात अदा करनी चाहिए? वाज़ेह रहे कि यह रक़म कम्पनी

पर एक साल से ज़्यादा के अ़र्से से वाजिबुल-अदा (देय) है।

जवाबः तन्ख़्वाह की रक़म जब तक वुसूल न हो उस पर ज़कात नहीं, तन्ख़्वाह की रक़म मिलने के बाद उस पर साल पूरा होगा तब उस पर ज़कात वाजिब होगी, और अगर आप पहले से साहिबे निसाब हैं तो जब निसाब पर साल पूरा होगा उसके साथ उस तन्ख़्वाह की प्राप्त की हुई रक़म पर भी ज़कात वाजिब हो जाएगी।

ज़कात किस हिसाब से अदा करें

सवालः यह फ़रमाएँ कि ज़कात जमा शुदा रक़म पर अदा की जाती है, जैसे किसी महीने एक शख़्स के पास 2 हज़ार रुपये हैं, तीसरे या चौथे महीने में वे पन्द्रह सौ रह जाते हैं, और जब साल मुकम्मल होता है तो वह रक़म दो हज़ार पाँच सौ होती है, तो अब किस हिसाब से ज़कात अदा करनी होगी, तफ़सील से मुत्तला फ़रमाएँ।

जवाबः पहले यह उसूल समझ लीजिए कि जिस शख़्स के पास थोड़ी-थोड़ी बचत होती रही, जब तक उसकी जमा शुदा पूँजी साढ़े बावन तोले (612.35 ग्राम) चाँदी की मालियत को न पहुँचे उस पर ज़कात वाजिब नहीं, और जब उसकी जमा शुदा पूँजी इतनी मालियत को पहुँच जाए (और वह क़र्ज़ से भी फ़ारिग़ हो) तो उस तारीख़ को वह "साहिबे निसाब" कहलाएगा। अब साल के बाद उसी चाँद की तारीख़ को उस पर ज़कात वाजिब हो जाएगी। उस वक़्त उसके पास जितनी जमा शुदा पूँजी हो (बशर्ते कि निसाब के बराबर हो) उस पर ज़कात वाजिब होगी, साल के दौरान अगर वह रक़म कम

ज़्यादा होती रही, उसका एतिबार नहीं। बस साल के अव्वल व आख़िर में निसाब का होना शर्त है।

कारोबार में लगाई गई रक़म पर ज़कात वाजिब है

सवालः मैं खुद एक कम्पनी में नौकरी करता हूँ। उसके साथ मैंने कुछ पैसा साझे में कारोबार में लगाया हुआ है, जिससे कुछ आमदनी हो जाती है। जिससे हमारा ख़र्च चलता है, और कुछ बचत (ज़्यादा से ज़्यादा 10-12 हज़ार रुपये सालाना) हो जाती है। क्या कारोबार में लगाए हुए पैसे पर ज़कात देना होगी जबकि हम बचत की हुई रक़म पर पूरे साल की ज़कात देते हैं?

जवाबः कारोबार में लगे हुए रुपये पर भी ज़कात है।

असल रक़म और मुनाफ़े पर ज़कात

सवालः एक शख़्स ने 5 हज़ार रुपये एक जायज़ तिजारत में लगाए हैं, साल गुज़रने के बाद वह कितनी रक़म ज़कात में देगा? असल रक़म पर ज़कात अदा की जाएगी या उस कुल मुनाफ़े पर जो साल भर में कमाया?

जवाबः साल गुज़रने पर असल रक़म मय मुनाफ़े के जितनी रक़म बनती हो उस पर ज़कात है।

क़ाबिले फ़रोख़्त माल और नफ़ा दोनों पर ज़कात वाजिब है

सवालः मुझे दुकान चलाते हुए तक़रीबन 3 साल हो गए

हैं। दुकान खोले तो ज़्यादा अ़र्सा हो गया है, लेकिन पहले बच्चों का सामान वग़ैरह था। मेरा सवाल यह है कि मैंने ज़कात कभी नहीं दी, आप मुझे बताईये कि मैं किस तरह से ज़कात दूँ। दुकान के पूरे माल पर ज़कात है या उससे जो सालाना मुनाफ़ा होता है उस पर? और इससे पहले जो मैंने ज़कात नहीं दी उसका क्या करूँ? क्योंकि मेरे वालिद साहिब का हज का भी फ़ार्म भरवा दिया गया है, उसमें मैंने भी कुछ रक़म दी है।

जवाबः आपकी दुकान में जितना क़ाबिले फ़रोख़्त (बेचने के लिये) सामान है, उसका हिसाब लगाकर और मुनाफ़ा जोड़कर साल के साल ज़कात दिया कीजिए, और उसके साथ घर में जो क़ाबिले ज़कात चीज़ हो उसकी ज़कात भी उसके साथ अदा कर दिया कीजिए। गुज़रे सालों की ज़कात भी आपके ज़िम्मे वाजिबुल-अदा है, उसको भी हिसाब करके अदा कीजिए। साल के अन्दर जो रक़म घर के मसारिफ़ (ख़र्चों) और दूसरी ज़रूरतों में ख़र्च हो जाती है उस पर ज़कात नहीं।

कारोबार में लगे क़र्ज़े को निकाल करके ज़कात दें

सवालः सूरतेहाल यह है कि मैं स्पेयर पार्टस का कारोबार करता हूँ। मैं कराची से माल लेकर आता हूँ और आगे छोटे-छोटे गाँवों में सप्लाई करता हूँ। मैं जिनसे माल लेता हूँ उनका क़र्ज़ा मेरे ऊपर तक़रीबन 30,000 रुपये है। और दूसरों के ऊपर मेरा क़र्ज़ा तक़रीबन 18,000 रुपये है, और मेरे पास

तक़रबीन 80,000 रुपये का माल मौजूद है। सवाल यह है कि मैं किस तरह से ज़कात निकालूँ?

एक जगह मैंने पढ़ा है कि कुल रक़म में से क़र्ज़ा निकाल कर जो बचे उस पर ज़कात अदा करनी पड़ती है, लेकिन वह रक़म जो कि दूसरों पर क़र्ज़ा हो उसके लिए क्या हुक्म है, और वह रक़म जो मैंने क़र्ज़ा दे रखी हो?

जवाबः जितनी मालियत आपके पास मौजूद है, चाहे नक़दी की शक्ल में हो या माले तिजारत की शक्ल में, तथा आपके वे क़र्ज़े जो लोगों के ज़िम्मे हैं, उन सबको जमा कर लिया जाए। इस मजमूई रक़म में से वे क़र्ज़े निकाल दिये जाएँ जो आपके ज़िम्मे हैं, निकालने के बाद जितनी मालियत बाक़ी है उसकी ज़कात अदा कर दिया करें। पूछी गयी सूरत में 68 हज़ार रुपये की ज़कात आपके ज़िम्मे वाजिब है।

क़ाबिले फ़रोख़्त माल की क़ीमत से क़र्ज़ निकाल करके ज़कात दी जाए

सवालः एक शख़्स ने क़र्ज़ के पैसों से एक दुकान खोली, साल पूरा होने पर हिसाब करके 95,000 रुपये का माल मौजूद था, जबकि शुरू में 1,10,000 का माल डाला था, और क़र्ज़ जो दुकान पर 60,000 रुपये का बक़ाया है, और नक़द दो हज़ार पड़े हुए, तो क्या उन पर ज़कात अदा हो सकती है या नहीं? अगर हो सकती है तो कितनी?

जवाबः जितनी मालियत का सामान क़ाबिले फ़रोख़्त (बेचने के लिये) है उसकी क़ीमत में से क़र्ज़ की रक़म अलग

करके बाक़ी बची रक़म में दो हज़ार जमा करके उसकी ज़कात अदा कर दीजिए।

उद्योग का हर क़ाबिले फ़रोख़्त माल भी माले ज़कात है

सवालः उद्योग के सिलसिले में कौनसा माल ज़कात से ख़ारिज है और कौनसे माल पर ज़कात वाजिब है?

जवाबः उद्योगपति के पास दो क़िस्म का माल होता है- एक कच्चा माल जो चीज़ों की तैयारी में काम आता है, और दूसरा तैयार शुदा माल। इन दोनों क़िस्म के मालों पर ज़कात है, अलबत्ता मशीनरी और दूसरी वे चीज़ें जिनके ज़रिये माल तैयार किया जाता है, उन पर ज़कात नहीं।

साल के दौरान जितनी भी रक़म आती रहे, लेकिन ज़कात साल के समापन पर मौजूद रक़म पर होगी

सवालः ज़कात के लिए रक़म या माल पर पूरा साल गुज़र जाना ज़रूरी है, जबकि माले तिजारत में फ़ायदे से जो इज़ाफ़ा होता है उस तमाम पर 12 महीने का पूरा अ़र्सा नहीं गुज़रता। मिसाल के तौर पर एक शख़्स के पास जनवरी 1984 ई. तक कुल सरमाया 20 हज़ार रुपये था, जो 3 महीने बाद अन्दाज़न 22 हज़ार रुपये हो गया, छह महीने गुज़रने पर 25 हज़ार रुपये हो गया, नौ महीने गुज़रने पर 28 हज़ार रुपये हो

गया और बारहवें महीने के ख़त्म तक उसकी रक़म बढ़कर तीस (30) हज़ार रुपये हो गई। अब ज़कात किस रक़म पर वाजिब होगी? जबकि वह शख़्स हमेशा अपनी ज़कात और दूसरी आमदनी के लिए हिसाब अंग्रेज़ी साल के समापन पर करता है।

जवाबः यहाँ दो मसले हैं- एक यह कि ज़कात में क़मरी (चाँद के) साल का एतिबार है, शमसी (अंग्रेज़ी) साल का एतिबार नहीं। अब या तो हिसाब चाँद के हिसाब से करना चाहिए और अगर अंग्रेज़ी साल के एतिबार से हिसाब करना ही मजबूरी और लाज़िमी हो तो दस दिन की ज़कात ज़्यादा अदा कर देनी चाहिए।

दूसरा मसला यह है कि चाँद के साल के ख़त्म होने पर उसके पास जितना माल हो उस सब पर ज़कात वाजिब हो जाएगी। जैसे किसी का ज़कात का साल पहली मुहर्रम से शुरू होता है, तो अगले साल पहली मुहर्रम को उसके पास जितना माल हो उस पर ज़कात अदा करे, चाहे उसमें से कुछ हिस्सा दो महीने पहले मिला हो या दो दिन पहले, ग़र्ज़ यह कि साल के दौरान जो माल आता रहे उस पर साल गुज़रने का हिसाब अलग से नहीं लगाया जाएगा, बल्कि जब असल निसाब पर साल पूरा होगा तो साल के पूरा होने पर जिस क़द्र भी सरमाया हो उस पूरे सरमाये पर ज़कात वाजिब हो जाएगी, चाहे उसके हिस्सों पर साल पूरा न हुआ हो।

जब निसाब के बराबर माल पर साल गुज़र जाए तो ज़कात वाजिब होगी

सवालः एक शख़्स का ऐसा कारोबार है कि उसे रोज़ाना

सौ रुपये बचत होती है, वह यह सौ रुपये बैंक में रखता है। मिसाल के तौर पर दस रजब से उसने यह पैसे जमा करने शुरू किए और दूसरे साल दस रजब को उसने हिसाब किया तो तक़रीबन 36,000 रुपये थे। अब उन पैसों में रमज़ान शव्वाल वग़ैरह के पैसे भी हैं जिन पर अभी साल नहीं गुज़रा, अब सवाल यह है कि आया वह शख़्स दस रजब को 36000 रुपये की ज़कात इकट्ठी निकालेगा या दस रजब से ढाई रुपये रोज़ाना निकालेगा? क्योंकि उसकी रोज़ाना बचत सौ रुपये है। क्या इकट्ठी ज़कात निकालने से वह दूसरे रजब तक ज़कात से फ़ारिग़ हो जाएगा, और यूँ उसकी ज़कात अदा हो जाएगी? जबकि माले ज़कात पर साल गुज़रना शर्त है।

जवाबः जब निसाब पर साल पूरा हो जाए तो साल के बाद जितना रुपया हो सब पर ज़कात वाजिब हो जाती है, चाहे कुछ रुपया बीच साल में हासिल हुआ हो, पूरे साल की ज़कात का हिसाब एक ही वक़्त किया जाता है, अलग-अलग दिनों का हिसाब नहीं किया जाता।

जैसे आपने जो सूरत लिखी है कि एक शख़्स ने दस रजब को सौ रुपये रोज़ाना जमा करने शुरू किए, अगले साल दस रजब को उसके पास 36000 रुपये हो गए, उसका साल उस वक़्त शुरू होगा जब उसकी उतनी रक़म जमा हो जाए जो साढ़े बावन तोले (612.35 ग्राम) चाँदी की मालियत के बराबर हो, जिस तारीख़ को इतनी मालियत जमा होगी उससे अगले साल उसी तारीख़ को जमा शुदा पूरी रक़म की ज़कात उसके ज़िम्मे वाजिब हो जाएग़ी।

ज़कात अन्दाज़े से देना सही नहीं

सवालः दुकान की ज़कात अन्दाज़े से अदा करना जायज़ है या नहीं? यानी अगर कपड़ा है तो उसको पूरा नापना चाहिए या अन्दाज़े से अदा कर दिया जाए?

जवाबः ज़कात पूरा हिसाब करके देनी चाहिए। अगर अन्दाज़ा कम रहा तो ज़कात का फ़र्ज़ ज़िम्मे रहेगा, अगर पूरे तौर पर हिसाब करना मुम्किन न हो तो ज़्यादा से ज़्यादा का अन्दाज़ा लगाना चाहिए।

किसी ख़ास मक़सद के लिए निसाब के बराबर माल पर ज़कात

सवालः अगर मैंने निसाब के बराबर रक़म किसी ख़ास मक़सद जैसे बहन वग़ैरह की शादी के लिए जमा कर रखी हो, तो भी क्या उस पर ज़कात वाजिब है?

जवाबः जी हाँ वाजिब है।

अगर पाँच हज़ार रुपये हों और निसाब से कम सोना हो तो ज़कात का हुक्म

सवालः ज़कात किस पर फ़र्ज़ है? अगर किसी शख़्स के पास पाँच हज़ार रुपये हों और निसाब से कम सोना हो तो क्या उस पर ज़कात देनी पड़ेगी? अगर हाँ तो कितनी?

जवाबः चूँकि पाँच हज़ार रुपये और सोना दोनों मिलकर साढ़े बावन तोले (यानी 612.35 ग्राम) चाँदी की मालियत से

बहुत ज़्यादा हैं, इसलिए उस शख़्स पर ज़कात फ़र्ज़ है, उसको चाहिए कि सोने के "आज के भाव" से क़ीमत लगा ले, और उसको पाँच हज़ार में जमा करके ढाई फ़ीसद के हिसाब से ज़कात अदा कर दे।

ज़ेवर की ज़कात बिक्री की क़ीमत पर

सवालः वाजिब ज़कात सोने की क़ीमत पर कैसे लगाई जाए? आया बाज़ार की मौजूदा बिक्री की क़ीमत (जिस पर सुनार बेचत हैं) या वह क़ीमत लगाई जाए जो अगर हम बेचना चाहें तो मिले (जो सुनार अदा करें)?

जवाबः जिस क़ीमत पर ज़ेवर फ़रोख़्त हो सकता है उतनी क़ीमत पर ज़कात वाजिब होगी।

ज़ेवरात की ज़कात की दर

सवालः 1: औरतों के पहनने के ज़ेवर पर ज़कात की शरह (दर) क्या है?

2: ज़ेवरात की क़ीमत मौजूदा बाज़ार के भाव पर लगाई जाएगी या जिस क़ीमत पर ख़रीदे गए हैं?

3: सात तोले से ज़ायद अगर सोने के ज़ेवरात हों तो पूरे ज़ेवरात पर ज़कात लगेगी या सात तोले उसमें से कम कर दिए जाएँगे?

जवाबः सोने चाँदी के ज़ेवरात की क़ीमत लगाकर ढाई फ़ीसद के हिसाब से ज़कात अदा की जाए। क़ीमत का हिसाब ज़कात वाजिब होने के दिन बाज़ार की क़ीमत से होगा, पूरे ज़ेवरात पर ज़कात्त होगी, सात तोले कम करके नहीं।

इस्तेमाल वाले ज़ेवरात पर ज़कात

सवालः ज़ेवरात जो औरत के इस्तेमाल में रहते हैं क्या उनपर ज़कात है या नहीं? क्योंकि इस्तेमाल में रहने वाली चीज़ों पर ज़कात नहीं है। मेरे एक अ़ज़ीज़ जेद्दा में रहते हैं, उनका बयान है कि जेद्दा के अ़रब लोग ज़ेवर पर ज़कात नहीं देते और कहते हैं कि यह रोज़मर्रा के इस्तेमाल की चीज़ है, वग़ैरह।

जवाबः इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि के नज़दीक ऐसे ज़ेवरात पर भी ज़कात है जो इस्तेमाल में रहते हों, अ़रबों के मस्लक में नहीं होगी।

ज़ेवरात और अशरफ़ी पर ज़कात वाजिब है

सवालः मेरे पास सोने-चाँदी के ज़ेवरात हैं जो कि इस्तेमाल में हैं और कुछ सोना चाँदी अपनी असली हालत पर यानी अशरफ़ी की सूरत मैं है। अब आया ज़कात दोनों क़िस्मों के सोने चाँदी पर है या सिर्फ़ अशरफ़ी की शक्ल के सोने और चाँदी पर? बाज़ लोगों का ख़्याल है कि इस्तेमाल के ज़ेवरात पर ज़कात नहीं, असल सूरतेहाल से मुत्तला फ़रमाएँ।

जवाबः इस्तेमाल के ज़ेवरात पर भी ज़कात है, लिहाज़ा उक्त सूरत में ज़कात दोनों पर वाजिब है, यानी ज़ेवरात और अशरफ़ी दोनों पर।

ज़ेवर के नग पर ज़कात नहीं लेकिन खोट सोने में शुमार होगा

सवालः क्या ज़कात ख़ालिस सोने पर लगाएँगे या ज़ेवरात

जिस में नग वग़ैरह भी शामिल हों उस नग के वज़न को शामिल करते हुए ज़कात लाज़िम होगी? और इसी तरह से खोट का क्या मसला है?

जवाबः सोने में जो नग वग़ैरह लगाते हैं उन पर ज़कात नहीं, क्योंकि उनको अलग किया जा सकता है, अलबत्ता जो खोट मिला देते हैं वह सोने के वज़न ही में शुमार होगा, उस खोट मिले सोने की बाज़ार में जो क़ीमत होगी उसके हिसाब से ज़कात अदा की जाएगी।

सोने की ज़कात

सवालः ज़कात जो माल के चालीसवें हिस्से की सूरत में अदा की जाती है, अगले साल अगर माल में इज़ाफ़ा नहीं हुआ तो क्या अदा किये हुए माल को कम करके दी जाएगी? जैसे साढ़े सात तोले सोने पर ज़कात वाजिब है, मौजूदा रेट के हिसाब से रक़म का ढाई फ़ीसद अदा कर देती हूँ। फ़र्ज़ करें कि सोने की मालियत 15000 है और ढाई फ़ीसद के हिसाब से 325 रुपये बनती है, अब अगले साल जबकि मेरे पास सोना साढ़े सात तोले से ज़्यादा नहीं हुआ, क्या उस सोने पर ज़कात होगी जो मैं 325 रुपये की सूरत में पिछले साल अदा कर चुकी हूँ। (क्योंकि माल का चालीसवाँ हिस्सा तो निकल चुका है) या इस साल भी साढ़े सात तोले पर दूँगी। मेरी ख़ाला बेवा है उसके पास साढ़े सात तोले से ज़ायद सोना है, क्या उस पर ज़कात वाजिब है? वह ज़कात की रक़म ले सकती हैं या नहीं? क्या उनकी यतीम बेटी (नाबालिग़) को रक़म देना सही है?

जवाबः साल पूरा होने के बाद आदमी के पास जितनी मालियत है उस पर ज़कात लाज़िम आती है। आपकी लिखी सूरत में आपने साढ़े सात तोले सोने पर 325 रुपये ज़कात के इस साल अदा कर दिए लेकिन सोने की यह मिक्दार (मात्रा) तो आपके पास महफ़ूज़ है और साल पूरा होने तक महफ़ूज़ रहेगी, इसलिए आईन्दा साल भी इस पूरी मालियत पर ज़कात लाज़िम होगी, अलबत्ता अगर आप सोने ही का कुछ हिस्सा ज़कात में अदा कर देतीं और बाक़ी सोना बक़्द्रे निसाब न रहता तो इस सूरत में यह देखना होगा कि उस सोने के अ़लावा तो आपके पास कोई ऐसी चीज़ नहीं जिस पर ज़कात फ़र्ज़ है, जैसे नक़द रुपया, तिजारती माल या किसी कम्पनी के शेयर वग़ैरह, पस अगर सोने के अ़लावा कोई और चीज़ भी मौजूद हो जिस पर ज़कात आती है और वह सोने के साथ मिलकर निसाब की मिक्दार को पहुँच जाती है तो जकात फ़र्ज़ होगी।

आपकी ख़ाला के पास अगर साढ़े सात तोले सोना मौजूद हो तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ है, उसको ज़कात देना जायज़ नहीं, यतीम नाबालिग़ लड़की अगर निसाब की मालिक न हो तो उसको ज़कात दे सकते हैं।

सोने की ज़कात का एक मसला

सवालः फ़र्ज़ करें मेरे पास निसाब का सोना 8 तोला है, मैंने आठ तोले की ज़कात अदा की, आईन्दा साल तक मैंने उसमें कोई इज़ाफ़ा नहीं किया और पिछले साल की ज़कात निकाल कर अब यह सोना निसाब से कम है, यानी मौजूद तो

आठ तोले ही है लेकिन चूँकि मैं आठ तोले का चालीसवाँ हिस्सा अदा कर चुका हूँ तो वह चालीसवाँ हिस्सा निकाल कर फिर निसाब बनेगा या हर साल आठ तोले पर ही ज़कात देनी होगी? वज़ाहत कर दें।

जवाबः पहले साल आपके पास आठ तोले सोना था, आपने उसकी ज़कात अपने पास के पैसों से अदा कर दी और वह सोना जूँ का तूँ आठ तोले महफ़ूज़ रहा तो आईन्दा साल भी उस पर ज़कात वाजिब होगी। हाँ! अगर आपने सोना ही ज़कात में दे दिया होता और सोने की मिक़दार साढ़े सात तोले से कम हो गई होती और आपके पास कोई और असासा (माल) न होता जिस पर ज़कात आती हो तो इस सूरत में आप पर ज़कात वाजिब न होती।

ज़ेवरात पर पिछले सालों की ज़कात

सवालः मेरे पास दस तोले सोने का ज़ेवर है जो मुझे दहेज में मिला था, अब हमारे पास इतना पैसा नहीं होता कि हम उसकी ज़कात अदा करें। हमारी शादी को भी तक़रीबन बीस साल हो गए हैं इस अ़र्से में किसी साल हमने ज़कात अदा की और किसी साल नहीं, अब मैं यह चाहती हूँ कि यह सोना अपने दोनों लड़कों के नाम पर पाँच-पाँच तोला तक़सीम कर दूँ। इस तरह पाँच तोले पर ज़कात अदा नहीं करनी पड़ेगी, अब इस बारे में तफ़सील से जवाब इनायत करें कि यह जायज़ है कि नहीं।

जवाबः पिछले जितने सालों की ज़कात आपने नहीं दी वह तो सोना फ़रोख़्त करके अदा कर दीजिए, आईन्दा अगर

आप अपने बेटों को हिबा कर देंगी तो आप पर ज़कात नहीं होगी, बेटे अगर साहिबे निसाब हुए तो उन पर होगी वरना उन पर भी नहीं होगी, लेकिन बेटों को हिबा करने के बाद उस ज़ेवर से आपका कोई ताल्लुक़ नहीं होगा।

बच्चियों के नाम पाँच-पाँच तोले सोना कर दिया और उनके पास चाँदी और रक़म नहीं तो किसी पर भी ज़कात नहीं

सवालः अगर कोई शख़्स अपनी बच्चियों के नाम अलग-अलग 5-5 तोले सोना रख दे ताकि उनके ब्याह-शादी में काम आ सके तो यह शरअ़न कैसा है? क्या मजमूए पर ज़कात वाजिब होगी? या यह अलग-अलग होने की सूरत में वाजिब न होगी?

जवाबः चूँकि ज़ेवर बच्चियों के नाम कर दिया गया है इसलिए वे उसकी मालिक बन गईं। इसलिए इस शख़्स के ज़िम्मे उसकी ज़कात नहीं और हर एक बच्ची की मिल्कियत चूँकि निसाब की हद से कम है इसलिए उनके ज़िम्मे भी ज़कात नहीं, अलबत्ता जो लड़की बालिग़ हो और उसके पास उस ज़ेवर के अ़लावा भी कुछ नक़द रुपया पैसा हो चाहे उसकी मिक़दार कितनी ही कम हो उस पर साल भी गुज़र जाए तो उस लड़की पर ज़कात लाज़िम होगी, क्योंकि जब सोने चाँदी के साथ कुछ नक़दी मिल जाए और मजमूए की क़ीमत साढ़े बावन तोले चाँदी के बराबर हो जाए तो ज़कात फ़र्ज़ हो जाती है। और जो लड़की नाबालिग़ है उसकी मिल्कियत पर ज़कात नहीं, जब तक कि वह बालिग़ नहीं हो

जाती।

पिछली ज़कात मालूम न हो तो अन्दाज़े से अदा करना जायज़ है

सवालः अगर ज़कात वाजिबुल-अदा (देय) थी लेकिन कम-इल्मी की बिना पर अदा न की जा सकी, ज़कात के वाजिबुल-अदा होने की मुद्दत का तो शुमार है जबकि ज़कात की रक़म का ठीक-ठीक हिसाब करना दुश्वार है, क्योंकि उस मुद्दत के सोने का भाव हासिल करना नामुम्किन तो नहीं मगर मुश्किल ज़रूर है, तो फिर ज़कात क्योंकर और किस तरह अदा की जाए? अगर यह मुद्दत 1970 ई. से हो तो?

जवाबः इस सूरत में तख़्मीना और अन्दाज़ा ही किया जा सकता है, कि तक़रीबन इतनी रक़म वाजिबुल-अदा होगी, एहतियात के तौर पर अन्दाज़े से कुछ ज़्यादा दें।

ज़कात का साल शुमार करने का उसूल

सवालः ज़कात कब तक अदा की जाती है, यानी ईद की नमाज़ से पहले या फिर बाद में भी अदा की जा सकती है?

जवाबः जिस तारीख़ को किसी शख़्स के पास निसाब के बक़्द्र माल आ जाए तो उस तारीख़ से चाँद कि हिसाब से पूरा साल गुज़रने पर जितनी रक़म उसकी मिल्कियत हो उसकी ज़कात वाजिब है, ज़कात में ईद से पहले और बाद का सवाल नहीं।

ज़कात की अदायेगी का वक़्त

सवालः ज़कात क्या सिर्फ़ रमज़ान के महीने ही में निकालना चाहिए या अगर किसी ज़रूरत-मन्द को हम ज़कात की मुक़र्ररा रक़म शाबान के महीने में देना चाहें तो क्या नहीं दे सकते? यह इसलिए पूछ रही हूँ कि कुछ लोगों को जिनको मैं यह रक़म देती हूँ वे कहते हैं कि रमज़ान में तक़रीबन हर चीज़ महंगी हो जाती है इसलिए अगर रक़म रमज़ान से पहले मिल जाए तो बच्चों वग़ैरह के लिए चीज़ें आसानी से ख़रीदी जा सकती हैं।

जवाबः ज़कात के लिए कोई महीना मुक़र्रर नहीं, इसलिए शाबान में या किसी और महीने में ज़कात दे सकते हैं और ज़कात का जो महीना मुक़र्रर हो उससे पहले ज़क़ात देना भी सही है।

सवालः कारोबारी आदमी ज़कात किस तरह निकाले? फ़र्ज़ कर लिया कि रमज़ान मुबारक 1400 (हिजरी) में हमारे पास एक लाख रुपया है, 2500 रुपया ज़कात दे दी, अब रमज़ान मुबारक 1401 हिजरी आने वाला है, हमारे पास एक लाख बीस हज़ार रुपये हो गए, एक साल में बीस हज़ार रुपया मुनाफ़ा हो गया, तक़रीबन शव्वाल के महीने में पाँच हज़ार, ज़िलहिज्जा में दस हज़ार, इसी तरह हर महीने में नफ़ा हुआ और साल के आख़िर में बीस हज़ार रुपये ख़ालिस नफ़ा हो गया, अब ज़कात कितनी रक़म पर निकालें और किस तरह निकालें? सुना है कि रक़म को एक साल पूरा होना चाहिए।

जवाबः साल के ख़त्म होने पर जितनी रक़म हो उसकी

ज़कात अदा की जाएगी, चाहे कुछ रक़म चन्द रोज़ पहले ही हासिल हुई हो। अ़वाम का ख़्याल है कि ज़कात का साल रमज़ान मुबारक ही से शुरू होता है और बाज़ रजब के महीने को "ज़कात का महीना" समझते हैं हालाँकि यह ख़्याल बिल्कुल ग़लत है।

शरई मसला यह है कि साल के किसी महीने में भी जिस तारीख़ को कोई शख़्स निसाब का मालिक हुआ हो एक साल गुज़रने के बाद उसी तारीख़ को उस पर ज़कात वाजिब हो जाएगी, चाहे मुहर्रम का महीना हो या कोई और, उस शख़्स को साल पूरा होने के बाद उस पर ज़कात अदा करना लाज़िम है। और साल के दौरान जो रक़म उसको हासिल हुई साल पूरा होने के बाद जब असल निसाब की ज़कात फ़र्ज़ होगी उसके साथ ही दौराने साल हासिल होने वाली रक़म पर भी ज़कात फ़र्ज़ होगी।

सवालः ज़कात की अदायेगी के लिए साल की एक तारीख़ का निर्धारित करना ज़रूरी है? या उस महीने की किसी तारीख़ को हिसाब कर लेना चाहिए?

जवाबः असल हुक्म यह है कि जिस तारीख़ से आप साहिबे निसाब हुए साल के बाद उसी तारीख़ को आप पर ज़कात फ़र्ज़ होगी, लेकिन ज़कात पेशगी अदा करना भी जायज़ है और इसमें ताख़ीर की भी गुन्जाईश है, इसलिए कोई तारीख़ मुक़र्रर कर ली जाए। अगर कुछ आगे पीछे हो जाए तब भी कोई हर्ज नहीं।

सवालः ज़कात ईसवी (अंग्रेज़ी) साल पर या सन् हिजरी (इस्लामी) साल पर निकाली जाए?

जवाबः ज़कात में क़मरी (चाँद के) साल का एतिबार है, अंग्रेज़ी साल का एतिबार नहीं। हुकूमत ने अगर अंग्रेज़ी साल मुक़र्रर कर लिया है तो ग़लत किया है।

साल पूरा होने से पहले ज़कात अदा करना सही है

सवालः जनाब हम ज़कात शबे-बराअत या रमज़ान मुबारक में निकालते हैं, शरई नुक़्ता-ए-नज़र से मालूम करना है कि मजबूरी के तहत ज़कात वक़्त से पहली निकाली जा सकती है या नहीं?

जवाबः जब आदमी निसाब का मालिक हो जाए ज़कात उसके ज़िम्मे वाजिब हो जाती है, और साल गुज़रने पर उसका अदा करना लाज़िम हो जाता है। अगर साल पूरा होने से पहले ज़कात अदा कर दे या आईन्दा के कई सालों की इकट्ठी ज़कात अदा कर दे तब भी जायज़ है।

ज़कात अदा न करने पर साल का शुमार

सवालः पिछले साल की ज़कात जो कि फ़र्ज़ थी किसी वजह से अदा न की जा सकी, दूसरा साल शुरू हो गया तो नये साल का हिसाब किस तरह किया जाएगा?

जवाबः जिस तारीख़ को पहला साल ख़त्म हुआ उस दिन जितनी मालियत थी उस पर पहले साल की ज़कात फ़र्ज़ होगी, अगले दिन से दूसरा साल शुरू समझा जाएगा।

बीच साल की आमदनी पर ज़कात

सवालः मैंने दस हज़ार रुपये तिजारत में लगाए और एक साल के बाद सितम्बर में ज़कात की मतलूबा रक़म निकाल दी। ज़कात निकालने के दो महीने बाद नवम्बर में एक प्लाट बेचकर मज़ीद पन्द्रह हज़ार रुपये तिजारत में लगा दिए। अब मैं मजमूई रक़म पच्चीस हज़ार रुपये पर आईन्दा साल किस महीने में ज़कात निकालूँ? या फिर अलग-अलग रक़म पर अलग-अलग महीनों में ज़कात अदा करूँ?

जवाबः ज़कात अंग्रेज़ी महीनों के हिसाब से नहीं निकाली जाती बल्कि इस्लामी चाँद के महीनों के हिसाब से निकाली जाती है। जब पहली रक़म पर साल पूरा हो जाए तो पूरी रक़म जो दरमियान साल में हासिल हुई उसकी ज़कात भी लाज़िम हो जाती है। हर एक के लिए अलग-अलग हिसाब नहीं किया जाता, इसलिए जब आपके साल पूरा होने की तारीख़ आए तो आप पच्चीस हज़ार रुपये और उस पर जो मुनाफ़ा हासिल हुआ उस सब की ज़कात अदा कीजिए।

गुज़रे साल की अदा न की हुई ज़कात का मसला

सवालः मेरा मसला यह है कि मैं पाबन्दी से हर साल ज़कात अदा करता हूँ। इस साल भी मेरी नीयत बिल्कुल साफ़ थी कि ज़कात अदा की जाएगी। चूँकि ज़कात देने के लिए सबसे पहली शर्त है कि ज़कात के महीने में हिसाब हर हाल में कर लिया जाए मगर ज़कात के आख़िरी दिनों में यानी

महीने के आख़िरी दस-पन्द्रह दिनों में एक पुलिस कैस मुझ पर हो गया, जिसकी भाग-दौड़ की वजह से ज़कात के महीने में हिसाब न कर सका। अब आपसे दरियाफ़्त करना है कि अब जबकि ज़कात का महीना ख़त्म हो चुका है, अब हिसाब इन दिनों में करके ज़कात अदा कर सकता हूँ या नहीं? और वह ज़कात क़ाबिले क़बूल होगी या नहीं? मैं चाहता हूँ कि बहरहाल अदा होनी चाहिए। या इसके अ़लावा अगर दूसरा कोई तरीक़ा क़ुरआन और सुन्नत की रोशनी में हो तो वैसा किया जाए।

जवाबः जब भी मौक़ा मिले हिसाब करके ज़कात अदा कर दीजिए अदा हो जाएगी, और ज़कात का कोई मुक़र्रर महीना नहीं होता, बल्कि चाँद के साल के जिस महीने की जिस तारीख़ को आदमी साहिबे निसाब हुआ हो आईन्दा साल उसी तारीख़ को उसका नया साल शुरू होगा, और पिछले साल की ज़कात उसके ज़िम्मे लाज़िम होगी, चाहे कोई सा महीना हो। बाज़ लोग रमज़ान को और बाज़ लोग रजब को ज़कात का महीना समझते हैं, यह ग़लत है।

माल की निकाली हुई ज़कात पर अगर साल गुज़र गया तो क्या उस पर भी ज़कात आएगी?

सवालः किसी ने अपने माल की ज़कात निकाली लेकिन उसे किसी मुस्तहिक़ के हवाले नहीं किया और एक साल पड़ी रही, तो क्या इस रक़म पर भी ज़कात निकाली जाएगी? यानी क्या ज़कात पर ज़कात निकाली जाएगी?

जवाबः ज़कात पर ज़कात नहीं, इस रक़म को तो ज़कात में अदा कर दे, उसके बाद जो रक़म बाक़ी बचे उसकी ज़कात अदा कर दे।

किस प्लाट पर ज़कात वाजिब है किस पर नहीं

सवालः अगर ख़ाली प्लाट पड़ा है और वह इस्तेमाल में नहीं है तो ज़कात उस पर लागू होती है या नहीं?

जवाबः अगर प्लाट के ख़रीदने के वक़्त यह नीयत थी कि मुनासिब मौक़े पर इसको फ़रोख़्त कर देंगे तो उसकी क़ीमत पर ज़कात वाजिब है, और अगर ज़ाती इस्तेमाल की नीयत से ख़रीदा था तो ज़कात वाजिब नहीं।

ख़रीदे हुए प्लाट पर ज़कात कब वाजिब होगी

सवालः अगर एक प्लाट (ज़मीन) लिया गया हो और उसके लिए कुछ इरादा नहीं कि आया उसमें हम रहेंगे या नहीं, तो इस सिलसिले में ज़कात के लिए क्या हुक्म है?

जवाबः प्लाट अगर इस नीयत से लिया गया था कि इसको फ़रोख़्त करेंगे तब तो वह माले तिजारत है और उस पर ज़कात वाजिब होगी, और अगर ज़ाती ज़रूरत के लिए लिया गया था तो उस पर ज़कात नहीं। और अगर ख़रीदते वक़्त तो फ़रोख़्त करने की नीयत नहीं की थी लेकिन बाद में फ़रोख़्त करने का इरादा हो गया तो जब तक उसको फ़रोख़्त न कर दिया जाए उस पर ज़कात वाजिब नहीं।

रिहाईशी मकान के लिए प्लाट पर ज़कात

सवालः मेरे पास ज़मीन का एक प्लाट 150 गज़ का है

जो कि मुझे चन्द साल पहले वालिदैन (माँ-बाप) ने ख़रीद कर दिया था, उस वक़्त प्लाट 35000 रुपये का लिया था मगर अब जब तक सिर्फ़ क़ीमते फ़रोख़्त चालीस हज़ार से ज़्यादा नहीं है (जबकि बेचने का इरादा नहीं बल्कि मकान की तामीर का इरादा है) क्या उस प्लाट पर ज़कात वाजिबुल-अदा है? कब से और किस हिसाब से?

जवाबः जो प्लाट रिहाईशी मकान के लिए ख़रीदा गया हो उस पर ज़कात नहीं।

तिजारती प्लाट पर ज़कात

सवालः अगर मकानात के प्लाटों की ख़रीद व फ़रोख़्त की जाए तो क्या ये माले तिजारत की तरह तसव्वुर होंगे, यानी उनकी मालियत पर ज़कात वाजिब है? या सिर्फ़ नफ़े पर? अगर प्लाट कई साल बाद फ़रोख़्त किया गया हो तो क्या हर साल उसकी ज़कात अदा करनी होगी या एक दफ़ा सिर्फ़ बेचने के साल में?

जवाबः अगर प्लाटों की ख़रीद व फ़रोख़्त का कारोबार किया जाए और फ़रोख़्त करने की नीयत से प्लाट ख़रीदा जाए तो प्लाटों की हैसियत तिजारती माल की होगी, उनकी कुल मालियत पर ज़कात वाजिब होगी।

सवालः कारोबारी मक़सद के लिए और अपनी रिहाईशी ज़रूरत के अलावा जो ज़मीन और मकानात ख़रीदे और क़ीमत बढ़ने पर फ़रोख़्त कर दिए इस सिलसिले में ज़कात के क्या अहकाम हैं?

जवाबः जो ज़मीन मकान या प्लाट फ़रोख़्त की नीयत से

ख़रीदा हो उस पर हर साल ज़कात वाजिब है, हर साल जितनी उसकी क़ीमत हो उसका चालीसवाँ हिस्सा निकाल दिया करें।

तिजारत के लिए मकान या प्लाट की मार्केट क़ीमत पर ज़कात है

सवालः जो मकान या प्लाट अपने पैसे से यह सोचकर ख़रीदा हो कि बाद में सोचेंगे, अगर रहना हुआ तो ख़ुद रहेंगे वरना बेच देंगे, उन प्लाट और मकान की तादाद अगर कई हो तो आया ज़कात वाजिब होगी? और अगर हाँ, तो क़ीमते ख़रीद पर या मार्केट वैल्यू पर?

जवाबः जो ज़मीन या प्लाट ख़रीदा जाए, ख़रीदते वक़्त उसमें तीन क़िस्म की नीयतें होती हैं- कभी तो यह नीयत होती है कि बाद में इसको फ़रोख़्त कर देंगे। इस सूरत में उसकी क़ीमत पर हर साल ज़कात फ़र्ज़ होगी, और हर साल मार्केट में जो उसकी क़ीमत हो उसका एतिबार होगा। जैसे एक प्लाट आपने पचास हज़ार का ख़रीदा था, साल के बाद उसकी क़ीमत सत्तर हज़ार हो गई तो ज़कात सत्तर हज़ार की देनी होगी। और दस साल बाद उसकी क़ीमत पाँच लाख हो गई तो अब ज़कात भी पाँच लाख की देनी होगी। ग़र्ज़ यह कि हर साल जितनी क़ीमत मार्केट में हो उसके हिसाब से ज़कात देनी होगी। और कभी यह नीयत होती है कि यहाँ मकान बनाकर ख़ुद रहेंगे, अगर इस नीयत से प्लाट ख़रीदा हो तो उस पर ज़कात नहीं। इसी तरह अगर ख़रीदते वक़्त न तो

फ़रोख़्त करने की नीयत थी और न खुद रहने की, इस सूरत में भी उस पर ज़कात नहीं।

जो मकान किराये पर दिया है उसके किराये पर ज़कात है

सवालः मेरे पास दो मकान हैं- एक मकान में मैं खुद रहता हूँ और दूसरा किराये पर, तो आया ज़कात मकान की मालियत पर है या उसके किराये पर? अल्लाह तआला आपको अज्रे अज़ीम नसीब फ़रमाए।

जवाबः इस सूरत में ज़कात मकान की क़ीमत पर वाजिब नहीं, अलबत्ता उसके किराये पर जबकि निसाब को पहुँचे तो ज़कात वाजिब होगी।

मकान की ख़रीद पर ख़र्च होने वाली रक़म पर ज़कात

सवालः एक महीना पहले मकान का सौदा कर चुके हैं, हमने दो महीने का वक़्त लिया था, जो कि रमज़ान में ख़त्म हो रहा है। बैआना एडवाँस अदा कर चुके हैं। अब ज़कात की अदायेगी किस तरह होगी? क्योंकि रक़म अब हमारी नहीं है मालिके मकान की हो गई, अब हमारा तो सिर्फ़ मकान हो गया, क्या उस रक़म से ज़कात अदा करें जो कि मालिक को देनी है।

जवाबः अगर ज़कात अदा करने से पहले मकान की क़ीमत अदा कर दी तो उस पर ज़कात वाजिब नहीं है, और

अगर साल ख़त्म हो गया अब तक मकान के पैसे अदा नहीं किए बल्कि बाद में वक़्ते मुक़र्ररा पर अदा करेंगे तो इस सूरत में ज़कात साकित न होगी, उस पर ज़कात वाजिब है।

हज के लिए रखी हुई रक़म पर ज़कात

सवालः एक शख़्स के पास अपनी कमाई की कुछ रक़म थी, उन्होंने हज करने के इरादे से दरख़्वास्त दी और रक़म जमा कराई, लेकिन क़ुर्आ-अन्दाज़ी में उनका नाम नहीं आया और हुकूमते वक़्त की जानिब से उनकी रक़म वापस मिल गई। वह शख़्स फिर आईन्दा साल हज करने का इरादा रखता है और दरख़्वास्त भी देने का इरादा है, आप यह बताएँ कि हज करने के लिए जो रक़म रखी गई है उस पर ज़कात अदा करनी ज़रूरी है या ऐसी रक़म से कोई ज़कात निकाली नहीं जाएगी, या दूसरी रक़म की तरह इस रक़म पर भी ज़कात निकाली जाएगी?

जवाबः इस रक़म पर भी ज़कात है।

चन्दे की ज़कात

सवालः हम एक बिरादरी के लोग एक मुश्तरका मक़सद के लिए (यानी खुदा न करे अगर उन्हीं लोगों में से किसी की मौत वाक़े हो जाए तो उसकी लाश को उसके वारिसों के हवाले करने के लिए जो ख़र्चे वग़ैरह होते हैं) चन्दा इकट्ठा कर लेते और यह चन्दा किसी का ज़्यादा होता है किसी का कम, लिहाज़ा मसला यह पूछना है कि एक साल इस चन्दे का गुज़र जाए और मजमूई तौर पर निसाबे ज़कात पर पूरा उतरे तो

क्या ज़कात वाजिबुल-अदा होगी या नहीं? अगर ज़कात वाजिबुल-अदा हो तो उसका अदायेगी का तरीक़ा क्या होगा?

जवाबः जो रक़म किसी नेक काम के चन्दे में दे दी जाए उसकी हैसियत माले वक़्फ़ की हो जाती है, और वह चन्दा देने वालों की मिल्क से ख़ारिज हो जाती है, इसलिए उस पर ज़कात नहीं।

ज़ेवरात के अ़लावा जो चीज़ें इस्तेमाल में हों उन पर ज़कात नहीं

सवालः एक आदमी के पास कुछ भैंसें हैं, कुछ कश्तियाँ हैं जिनसे वह मछली का शिकार करता है, और जाल भी है, जाल की क़ीमत साठ सत्तर हज़ार रुपये है, और तमाम चीज़ों की मालियत तक़रीबन 4 लाख बनती है, उन पर ज़कात देनी होगी या नहीं?

जवाबः ये चीज़ें इस्तेमाल की हैं, इन पर ज़कात नहीं, अलबत्ता ज़ेवरात पर ज़कात है चाहे वह पहने हुए रहते हों।

ज़ेवरात के अ़लावा इस्तेमाल की चीज़ों पर ज़कात नहीं

सवालः ज़कात किन लोगों पर वाजिब है? क्या राहत व आराम की चीज़ों जैसे (रेडियो, टी. वी., फ़्रिज, वाशिंग मशीन, मोटर साईकल) वग़ैरह पर भी ज़कात देनी है?

जवाबः ज़ेवरात के अ़लावा इस्तेमाल की चीज़ाँ पर ज़कात नहीं।

इस्तेमाल के बरतनों पर ज़कात

सवालः ऐसे बरतन (जैसे देग, बड़े देगचे वग़ैरह) जो साल में दो तीन बार इस्तेमाल हों, उनकी भी ज़कात क़ीमते ख़रीद या मौजूदा पर होगी (ताँबे की) या उस क़ीमत पर जिस पर कि दुकानदार पुराने (बिना टूटे हुए) बरतन ख़रीद कर अदा करते हैं।

जवाबः ऐसे बरतन जो इस्तेमाल के लिए रखे हों, चाहे उनके इस्तेमाल की नौबत कम ही आती हो, उन पर ज़कात वाजिब नहीं।

दवाओं पर ज़कात

सवालः दुकान में पड़ी दवाओं पर ज़कात लाज़िम है या सिर्फ़ उसकी आमदनी पर?

जवाबः दवाओं की क़ीमत पर भी लाज़िम है।

उधार की रक़म की ज़कात

सवालः मैं एक ऐसा काम करता हूँ कि मेरी मेहनत की काफ़ी रक़में लोगों की तरफ़ वाजिबुल-वुसूल (आनी बाक़ी) रहती हैं, और वुसूली भी पाँच-छह महीने बाद होती है, कुछ लोगों से वुसूली की बहुत कम उम्मीद भी होती है, क्या उन आने वाली रक़मों पर ज़कात देनी चाहिए या जब वुसूल हो जाएँ उसके बाद?

जवाबः कारीगर को काम करने के बाद जब उसकी उजरत व मेहनत वुसूल हो जाए तब उसका मालिक होता है, पस अगर आप साहिबे निसाब हैं तो जब आपका ज़कात का

साल पूरा हो उस वक़्त तक जितनी रक़में वुसूल हो जाएँ उनकी ज़कात अदा कर दिया कीजिए और जो आईन्दा साल वुसूल होंगी उनकी ज़कात भी आईन्दा साल दी जाएगी।

शेयरों पर ज़कात

सवालः मेरे पास एक कम्पनी के सात सौ शेयर हैं, जिनकी असली क़ीमत दस हज़ार रुपये प्रति शेयर है, जबकि मौजूदा क़ीमत 30 रुपये प्रति शेयर है, ज़कात कौनसी क़ीमत पर वाजिब होगी?

जवाबः शेयरों की उस क़ीमत पर जो ज़कात वाजिब होने के दिन हो।

सवालः जुमा के प्रकाशन में शेयरों पर ज़कात की अदायेगी के बारे में मसला पढ़ा, लेकिन सवाल यह है कि तमाम लिमिटेड कम्पिनियाँ ज़कात व उश्र के हुक्म नामे (1980 ई.) के तहत कम्पनी के असासों (सरमाये और मालियत) पर ज़कात काटती करती हैं और यह रक़म उस हुक्म नामे की दफ़ा 7 के मुताबिक़ क़ायम-शुदा केन्द्रीय ज़कात फ़न्ड को मुन्तक़िल कर दी जाती है, तथा यह अदा शुदा ज़कात शेयर धारकों के शेयरों के अनुपात के हिसाब से उनके हासिल शुदा मुनाफ़े में से काट ली जाती है। पूछना यह है कि एक बार मुश्तरका कारोबार में से ज़कात काटने के बाद भी क्या दोबारा हर हिस्सेदार को अपने उन शेयरों पर व्यक्तिगत तौर पर ज़कात अदा करनी होगी?

जवाबः अगर हिस्सेदारों (शेयर धारकों) के शेयरों से ज़कात वुसूल कर ली गई तो उनको व्यक्तिगत तौर पर अपने

हिस्सों (शेयरों) की ज़कात देने की ज़रूरत नहीं, अलबत्ता इसमें गुफ़्तगू हो सकती है कि हुकूमत जिस अन्दाज़ से ज़कात काट लेती है वह सही है या नहीं? और उससे ज़कात अदा हो जाती है या नहीं? बहुत से उलेमा हुकूमत के काम के तरीक़े को सही कहते हैं और इससे ज़कात अदा हो जाने का फ़तवा देते हैं, जबकि बहुत से उलेमा की राय इसके ख़िलाफ़ है, और वे हुकूमत की काटी हुई ज़कात को अदा शुदा नहीं समझते, उन हज़रात के नज़दीक तमाम रक़मों की ज़कात मालिकों को खुद अदा करनी चाहिए जो हुकूमत ने काट ली हो।

ख़रीदे हुए बीज या खाद पर ज़कात नहीं

सवालः ज़मीन के लिए जिन पैसों से बीज और खाद ख़रीद कर रखा है क्या उन पर भी ज़कात अदा करनी चाहिए?

जवाबः जो खाद और बीज ख़रीदकर रख लिया है, उस पर ज़कात नहीं।

प्राविडेंट फ़न्ड पर ज़कात

सवालः मैं एक मक़ामी बैंक में मुलाज़िम हूँ जहाँ मेरा फ़न्ड 29 हज़ार रुपये जमा हो गया है और उसमें से मैंने कुल 27 हज़ार रुपये बतौर लोन लिया है, क्या उस पर भी ज़कात देनी होगी? अगर देनी होगी तो कब से और कितनी?

जवाबः प्राविडेन्ट फ़न्ड (प्री. एफ़.) पर ज़कात उस वक़्त वाजिब होती है जब वह वुसूल हो जाए, जब तक वह हुकूमत के खाते में जमा है उस पर ज़कात वाजिब नहीं, इस मसले पर

हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब का रिसाला मुताले के क़ाबिल है।

कम्पनी में निसाब के बराबर जमा शुदा रक़म पर ज़कात वाजिब है

सवालः मैंने पैसे किसी कम्पनी को दिए हैं जो कि मुनाफ़े व नुक़सान की बुनियाद पर हर महीने मुनाफ़ा अदा करती है, जिससे हमारे घर के ख़र्चे मुश्किल से पूरे होते हैं। मेरी आमदनी कभी इतनी नहीं होती कि बहुत ही ज़रूरी घर के ख़र्चों के बाद कुछ बचत कर ली जाए क्योंकि हमारे बच्चे बहुत हैं।

अब मालूम यह करना है कि ज़कात किस तरह से अदा हो, अगर माहाना आमदनी से अदा करते हैं तो फ़ाक़े की सूरत पेश आती है, और अगर असल माल से निकलवाते हैं तो भी आमदनी और कम हो जाती है, और हाथ तो पहले ही तंग रहता है, फिर क़र्ज़ उठाने की ज़रूरत पेश आएगी, जिससे हमेशा बचता हूँ और क़र्ज़ कभी नहीं लेता, रहनुमाई फ़रमाएँ।

जवाबः जो रक़म आपने कम्पनी में जमा कर रखी है, अगर वह मालियते निसाब (साढ़े बावन तोले चाँदी) के बराबर हो तो उसकी ज़कात आपके ज़िम्मे है, ज़कात अदा करने की जो सूरत भी आप इख़्तियार करें।

बैंक जो ज़कात काटता है उसका इन्कम टैक्स से कोई ताल्लुक़ नहीं

सवालः एक शख़्स के पास घर में 10 हज़ार हैं, बैंक में

भी 10 हज़ार हैं, बैंक की रक़म से हुकूमत ज़कात काटती है और वह शख़्स इन्कम टैक्स भी अदा करता है, तो क्या वह रक़म जो बैंक में जमा है उस पर ज़कात दोबारा देगा? जबकि इन्कम टैक्स भी हुकूमत को देना है, या सिर्फ़ वह रक़म जो उसके घर में मौजूद है सिर्फ़ उस पर ज़कात अदा करनी होगी?

जवाबः बैंक जो ज़कात काटता है बाज़ उलेमा के नज़दीक ज़कात अदा हो जाती है और हुकूमत को जो इन्कम टैक्स देना है उतनी मिक़दार (मात्रा) को छोड़कर बाक़ी रक़म की ज़कात अदा कर दी जाए।

क़र्ज़दार को दी हुई रक़म पर ज़कात वाजिब है और ज़कात में क़ीमती कपड़े दे सकते हैं

सवालः मेरा सवाल यह है कि मैंने घर-ख़र्च में से बचा-बचाकर 5 हज़ार रुपये जमा किए हैं और उनमें से 600 रुपये तो एक आदमी को क़र्ज़ दे दिए, दो साल हो गए उसने आज तक वापस नहीं किए हैं, और न ही अभी वापस करने का कोई इरादा है, बाक़ी रक़म भी किसी ज़रूरत-मन्द ने माँगी तो मैंने उसे दे दी, उसे भी एक साल हो गया, उसने भी वापस नहीं दी, तो पूछना यह है कि क्या इस रक़म पर भी ज़कात देनी होगी या नहीं? जवाब ज़रूर दें और जो कपड़े मैंने अपने पहनने के लिए बनाए हैं वे कपड़े ज़कात में दे सकते हैं या नहीं?

जवाबः जो रक़म किसी को क़र्ज़ दे रखी हो उसकी

ज़कात हर साल अदा करना ज़रूरी है, चाहे रक़म की वापसी से पहले हर साल देते रहें या रक़म वुसूल होने के बाद पिछले तमाम सालों की ज़कात एक-मुश्त अदा करें। कपड़ों की क़ीमत लगाकर उनको ज़कात में दे सकते हैं, लेकिन ऐसा न हो कि वे कपड़े लायक़े इस्तेमाल न रहने की वजह से आपके दिल से उतर गए हों और आप सोचें कि चलो इनको ज़कात ही मैं दे डालूँगा।

टैक्सी के ज़रिये किराये की कमाई पर ज़कात है, टैक्सी पर नहीं

सवालः एक शख़्स के पास एक लाख रुपया है, उससे दो एक टैक्सी ख़रीदता है, एक साल बाद चालीस हज़ार रुपया कमाई हो गई, अब ज़कात कितनी रक़म पर दे?

जवाबः अगर गाड़ी फ़रोख़्त की नीयत से नहीं ख़रीदी बल्कि कमाई के लिए ख़रीदी है तो साल के बाद सिर्फ़ चालीस हज़ार रुपये की ज़कात देंगे, गाड़ी कमाने का ज़रिया है उस पर ज़कात नहीं।

और अगर उस शख़्स के पास गाड़ी की कमाई के अलावा कुछ रुपया पैसा या ज़ेवर न हो तो उसकी ज़कात का साल उस दिन से शुरू होगा जिस दिन गाड़ी की कमाई साढ़े बावन तोले चाँदी की मालियत को पहुँच गई थी।

सवालः एक टैक्सी हमने 48 हज़ार की ली थी, मालिक को क़िस्तों के ज़रिये हम रुपये दे चुके हैं, फिर यह टैक्सी हमने 55 हज़ार रुपये में फ़रोख़्त कर दी, जिसमें हमने दस

हज़ार रुपये नक़द लिए और डेढ़ हज़ार रुपये क़िस्त में उनसे ले रहे हैं। तक़रीबन 32 हज़ार रुपये हम वुसूल कर चुके हैं और 13 हज़ार रुपये बाक़ी हैं, उस पहले वाली टैक्सी को फ़रोख़्त करके वैसी ही दूसरी टैक्सी अट्ठानवे हज़ार पाँच सौ रुपये की उधार ली, तीन हज़ार रुपये क़िस्त वार देते हैं, डेढ़ हज़ार रुपये पहले वाली टैक्सी के और डेढ़ हज़ार इस नई टैक्सी पर कमाते हैं, और क़िस्त देते हैं। इस टैक्सी के 70 हज़ार रुपये का हिसाब यानी ज़कात हम किस तरह अदा करें और यह कि कितने रुपये हमें ज़कात के देने होंगे?

जवाबः इन गाड़ियों से जो मुनाफ़ा हासिल हो जाए और निसाब की हद तक पहुँच जाए तो साल गुज़रने के बाद उस पर ज़कात आएगी, सिर्फ़ गाड़ियों पर ज़कात नहीं आएगी, क्योंकि यह नफ़ा और कमाई करने के आलात (सामान और यंत्र) हैं, उन पर ज़कात नहीं आती, लेकिन यह ख़्याल रहे कि बाज़ लोग गाड़ी इसी नीयत से ख़रीदते हैं कि जूँही इसके अच्छे दाम मिलेंगे इसको फ़रोख़्त कर देंगे, और यह उनका गोया बाक़ायदा कारोबार है, ऐसी गाड़ी दर हक़ीक़त माले तिजारत है और उसकी क़ीमत पर ज़कात वाजिब है।

ज़कात अदा करने का तरीक़ा

एकमुश्त किसी एक को ज़कात निसाब के बराबर देना

सवालः एक मसला आपसे मालूम करना चाहता हूँ। वह यह कि मैं ज़कात किसी एक को दे देता हूँ और उसकी रक़म तक़रीबन हज़ारों रुपये होती है, यह मैं इस वजह से करता हूँ कि किसी मुस्तहिक़ का कोई काम पूरा हो जाए। क्या ऐसी सूरत में यह ज़कात देना जायज़ है?

जवाबः ज़कात अदा हो जाती है मगर किसी को एकमुश्त इतनी ज़कात दे देना कि वह साहिबे निसाब हो जाए, मक्रूह है।

बग़ैर बताये ज़कात देना

सवालः समाज में बहुत से ऐसे लोग हैं जो ज़कात लेना शर्म का सबब समझते हैं, अगरचे यह नज़रिया ग़लत है। तो क्या ऐसे लोगों को बग़ैर बताये इस मद में से किसी दूसरे तरीक़े से अदा की जा सकती है, जैसे उनके बच्चों के कपड़े बनवा दिए जाएँ, उनके बच्चों की तालीम में इमदाद की जाए, इस सूरत में जबकि ज़कात देने वाले पर और रक़म मुम्किन न हो।

जवाबः ज़कात देते वक़्त यह बताना ज़रूरी नहीं कि यह ज़कात है। हदिये या तोहफ़े के नाम से अदा की जाए और

अदा करते वक़्त नीयत ज़कात की कर ली जाए तो ज़कात अदा हो जाएगी।

सवालः किसी दोस्त अहबाब की हम ज़कात की रक़म से मदद करें और उसको एहसास हो जाने की वजह से हम बताएँ नहीं, तो क्या ज़कात अदा हो जाएगी?

जवाबः मुस्तहिक़ को यह बताना ज़रूरी नहीं कि यह ज़कात है, उसे किसी भी उनवान से ज़कात दे दी जाए और नीयत ज़कात की कर ली जाए तो ज़कात अदा हो जाएगी।

ज़कात अदा करने की एक सूरत

सवालः अगर ज़कात के रुपये हमारे पास घर पर रखे हैं, घर के बाहर अगर कोई ज़रूरत-मन्द मिल जाए हम जेब के पैसों में से कुछ दे दें और उतने पैसे हम घर आकर ज़कात के पैसों में से ले लें तो ज़कात अदा हो जाएगी या नहीं?

जवाबः अदा हो जाएगी।

माल वाले के हुक्म के बग़ैर वकील ज़कात अदा नहीं कर सकता

सवालः एक साहिबे ज़कात ने अपनी ज़कात के पैसे का किसी को वकील नहीं बनाया और दूसरा कोई माल वाले की इजाज़त के बग़ैर अदा कर दे तो अदा होगी या नहीं?

जवाबः अगार दूसरा आदमी माल वाले के हुक्म या इजाज़त से उसकी तरफ़ से ज़कात अदा कर दे तो ज़कात अदा हो जाएगी, वरना नहीं।

ज़कात की पब्लिसिटी

सवालः अख़बार जंग में एक फ़ोटो शाया हुआ है कि बेवाओं में मशीनें तक़सीम कर रहे हैं, ज़कात कमेटी के चेयरमैन हैं, क्या शरीअ़त इसकी इजाज़त देती है कि इस तरह ज़कात की तशहीर (पब्लिसिटी) की जाए?

जवाबः फ़ोटो छापना तो आजकल नुमाईश और रियाकरी का पसन्दीदा मशग़ला है, जिन बेवाओं को सिलाई मशीनें तक़सीम की गईं अगर वे ज़कात की मुस्तहिक़ थीं तो ज़कात अदा हो गई, वरना नहीं। ज़कात की तशहीर (पब्लिसिटी करना) इस नीयत से तो दुरुस्त है कि उससे ज़कात देने वालों को तरग़ीब (तवज्जोह और शौक़) हो और रियाकारी और नमूद व नुमाईश की ग़र्ज़ से ज़कात की तशहीर जायज़ नहीं, बल्कि उससे सवाब बातिल हो जाता है।

थोड़ी-थोड़ी ज़कात देना

सवालः अगर कोई औ़रत अपनी रक़म या सोना जो उसके पास है, उस पर सालाना ज़कात न निकालती हो बल्कि हर महीने कुछ न कुछ किसी ज़रूरत-मन्द को दे देती हो, कभी नक़द रक़म कभी अनाज वग़ैरह और वह उसका हिसाब भी अपने पास न रखती हो, तो ऐसा करना ज़कात देने में शुमार होगा या नहीं?

जवाबः ज़कात की नीयत से जो कुछ देती है उतनी ज़कात अदा हो जाएगी, लेकिन यह कैसे मालूम होगा कि उसकी ज़कात पूरी हो गई या नहीं, इसलिए हिसाब करके

जितनी ज़कात निकलती हो वह अदा करनी चाहिए। अलबत्ता यह इख़्तियार है कि इकट्ठी दे दी जाए या थोड़ी-थोड़ी करके साल भर में अदा कर दी जाए। मगर हिसाब रखना चाहिए। और यह भी याद रखना चाहिए कि ज़कात अदा करते वक़्त ज़कात की नीयत करना ज़रूरी है, जो चीज़ ज़कात की नीयत से न दी जाए उससे ज़कात अदा नहीं होगी, अलबत्ता अगर ज़कात की नीयत करके कुछ रक़म अलग रख ली और फिर उसमें से वक़्त-वक़्त पर देती रहे तो ज़कात अदा हो जाएगी।

सवालः अगर कोई शख़्स यह चाहे कि साल के आख़िर में ज़कात अदा करने के बजाये हर महीने कुछ रक़म ज़कात के तौर पर निकालता रहे तो यह अ़मल दुरुस्त है या नहीं? एक साहिब का कहना है कि इस तरह ज़कात अदा नहीं होगी, इस तरह सदक़ा निकालना चाहिए।

जवाबः हर महीने थोड़ी-थोड़ी ज़कात निकालते रहना दुरुस्त है।

सवालः अ़र्ज़ है कि मेरा बड़ा कारोबार है, लेकिन मैं जो सालाना ज़कात हिसाब करके आहिस्ता-आहिस्ता विभिन्न मदरसों या ग़रीबों में में तक़रीबन आठ नौ महीनों में ज़कात अदा कर देता हूँ। मैंने सुना है कि ज़कात रमज़ान के महीने में पूरी की पूरी अदा कर देनी चाहिए। बराहे मेहरबानी क़ुरआन व सुन्नत की रोशनी में मुकम्मल बताएँ कि ज़कात की रक़म किस महीने में या फिर आहिस्ता-आहिस्ता दे दें तो कोई हर्ज तो नहीं? तफ़सील के साथ लिखें।

जवाबः आप जब से साहिबे निसाब हुए उस तारीख़ (चाँद की तारीख़ मुराद है) के आने पर ज़कात फ़र्ज़ हो जाती

है चाहे रमज़ान हो या मुहर्रम, बेहतर तो यही है कि हिसाब करके ज़कात की रक़म अलग कर ली जाए, लेकिन अगर थोड़ी-थोड़ी करके साल भर में अदा की जाए तब भी ज़कात अदा हो जाएगी, और जब साल शुरू हो उसी वक़्त से थोड़ी-थोड़ी ज़कात पेशगी अदा करते रहें तो यह भी दुरुस्त है, ताकि साल के ख़त्म होने पर ज़कात भी अदा हो जाए।

बहरहाल जितनी मिक़दार ज़कात की वाजिब हो उसका अदा हो जाना ज़रूरी है।

सवालः अगर कोई ज़कात हर महीने क़िस्तों में अदा करना चाहता है तो दो सूरतें हो सकती हैं- फ़र्ज़ करें वह पिछली ज़कात अदा कर चुका है, अब उस पर ज़कात वाजिब नहीं।

(1) पहली सूरत में वह एक साल गुज़रने के बाद हिसाब लगाए कि उस पर कितनी ज़कात फ़र्ज़ हुई है और उस रक़म को महीनेवार क़िस्तों में अदा करना शुरू कर दे, लेकिन अगर इस दौरान वह मर गया तो ज़कात का बोझ उस पर रह जाएगा।

(2) दूसरी सूरत में वह हिसाब लगाए कि साल के आख़िर तक उस पर कितनी ज़कात फ़र्ज़ हो जाएगी और क़िस्तवार अदा करना शुरू कर दे, जो कमी-बेशी हो वह आख़िरी महीने में बराबर करे, ऐसी सूरत में जब वह मरेगा तो उस पर ज़कात का बोझ नहीं होगा, लेकिन क्या इस तरह ज़कात अदा हो जाएगी?

जवाबः पेशगी ज़कात देना सही है, इसलिए उसकी ज़कात अदा हो जाएगी।

सवालः मैंने रमज़ान के महीने में जितनी ज़कात निकाली थी वह रक़म अलग करके रख दी, अब एक दो घरों को जिनको मैं ज़कात देना चाहता हूँ उनको हर महीने उसमें से निकाल कर दे देता हूँ क्योंकि अगर एक साथ दे दिए जाएँ तो ये लोग ख़र्च कर देते हैं और फिर परेशान रहते हैं। आप शरई नुक़्ता-ए-नज़र से बता दीजिए कि मेरा यह फ़ेल दुरुस्त है या नहीं? इस सिलसिले में एडवांस ज़कात देने के मुताल्लिक़ भी बता दें तो इनायत होगी।

जवाबः आपका यह फ़ेल दुरुस्त है कि ज़कात की रक़म निकाल कर अलग रखे और मौक़े के मुताबिक़ निकालता रहे, और जो शख़्स साहिब निसाब हो अगर वह साल गुज़रने से पहले ज़कात अदा कर दे या कई साल की पेशगी ज़कात अदा कर दे तो यह भी जायज़ है।

प्रस्तावित पेशगी ज़कात की रक़म से क़र्ज़ देना

सवालः मैं हर महीने ज़कात के रुपये निकालती हूँ और रमज़ान शरीफ़ में दे देती हूँ। अगर कोई आ़म दिनों में मुझसे यह रुपये क़र्ज़ माँगे तो क्या मैं दे सकती हूँ?

जवाबः जब तक वह रक़म आपके पास है आपकी मिल्कियत है, आप उसका जो चाहें कर सकती हैं।

गुज़रे सालों की ज़कात

सवालः एक शख़्स पर ज़कात वाजिब है लेकिन वह ज़कात अदा नहीं करता, कुछ अ़र्से के वह ख़ुदा के हुज़ूर तौबा इस्तिग़फ़ार करता है और आईन्दा ज़कात अदा करने का

अपने खुदा से वादा करता है, पिछली ज़कात के बारे में उस पर क्या हुक्म है? क्या वह पिछली ज़कात भी अदा करे? मसलन् दस साल तक ज़कात अदा नहीं की जबकि उसके पास ज़ाती मकान भी नहीं और तन्ख़्वाह भी सिर्फ़ गुज़ारे की हो, ऐसे शख़्स के लिए ज़कात के बारे में क्या हुक्म है?

जवाबः नमाज़, ज़कात, रोज़ा सब का एक ही हुक्म है। अगर कोई शख़्स ग़फ़लत और कोताही की वजह से इन फ़राईज़ को छोड़ता रहा तो सिर्फ़ तौबा इस्तिग़फ़ार से ये फ़राईज़ माफ़ नहीं होंगे, बल्कि हिसाब करके जितने सालों की नमाज़ें उसके ज़िम्मे हैं उनको थोड़ी-थोड़ी करके अदा करना शुरू कर दे। जैसे हर नमाज़ के साथ एक क़ज़ा नमाज़ अदा कर लिया करे, बल्कि नफ़्लों की जगह भी क़ज़ा नमाज़ें पढ़ा करे, यहाँ तक कि गुज़रे सालों की सारी नमाज़ें पूरी हो जाएँगी। इसी तरह ज़कात का हिसाब करके वक़्त-वक़्त पर अदा करता रहे यहाँ तक कि गुज़िश्ता सालों की ज़कात पूरी हो जाए। इसी तरह रोज़े का हुक्म समझ लिया जाए। ग़र्ज़ यह कि इन क़ज़ा हुए फ़राईज़ का अदा करना भी ऐसा ही ज़रूरी है जैसा कि अदा फ़राईज़ का।

गुज़रे सालों की ज़कात कैसे अदा करें

सवालः मेरी शादी तेरह साल पहले हुई थी, उस पर मैंने अपनी बीवी को छह तोले सोना और बीस तोले चाँदी तोहफ़े के तौर पर दी थी-

(1) इस मालियत पर कितनी ज़कात हो गई।

(2) दो साल बाद उस मालियत में सोना एक तोला कम

हो गया, यानी बाद में 5 तोले सोना और 20 तोले चाँदी रह गई है, उसको तक़रीबन 11 साल हो गए हैं, जिसकी कोई ज़कात नहीं दी गई, अब उसकी कितनी ज़कात दें, हिसाब करके बताएँ। अगर सोना दें तो कितना देना है।

सवालः मेरी बहन के पास 9 तोले सोना है और 20 तोले चाँदी है, और यह सत्रह साल से है, आप बताएँ उसको अब कितनी ज़कात देनी है?

जवाबः दोनों मसलों का एक ही जवाब है, आपकी बीवी और आपकी बहन की मिल्कियत में जिस तारीख़ को सोना और चाँदी आए हर साल चाँद के उस महीने की तारीख़ को उन पर ज़कात फ़र्ज़ होती रही, जो उन्होंने अदा नहीं की, इसलिए तमाम गुज़रे सालों की ज़कात अदा करना उनके ज़िम्मे लाज़िम है।

गुज़िश्ता (पिछले) सालों की ज़कात अदा करने का तरीक़ा यह है कि पहले साल सोने और चाँदी की जो मिक़दार थी उसका चालीसवाँ हिस्सा ज़कात में दिया जाए। फिर दूसरे साल उस चालीसवें हिस्से की मिक़दार निकाल करके बाक़ी बचे का चालीसवाँ हिस्सा निकाला जाए। इसी तरह सत्रह साल का हिसाब लगाया जाए और उन बाक़ी तमाम सालों की ज़कात का मजमूआ जितनी मिक़दार सोने और चाँदी की बने वह ज़कात में अदा कर दी जाए।

आपकी बहन के पास सत्रह साल पहले 9 तोले सोना और 20 तोले चाँदी थी, मैंने सत्रह साल की ज़कात का हिसाब लगाया तो सोने की ज़कात की मजमूई मिक़दार 36.7 ग्राम बनी, और चाँदी की ज़कात की मजमूई मिक़दार (मात्रा)

81.601 ग्राम बनी, लिहाज़ा 9 तोले सोने और 20 तोले चाँदी की ज़कात में उपर्युक्त मिक़दार का अदा करना आपकी बहन के ज़िम्मे लाज़िम है, और आपकी बीवी के ज़िम्मे ग्यारह साल की ज़कात में 14.795 ग्राम सोना और 25.509 ग्राम चाँदी का अदा करना लाज़िम है।

दुकान की ज़कात किस तरह अदा की जाए

सवालः मैं एक दुकान का मालिक हूँ जो कि आज से तक़रीबन चार साल पहले 20 हज़ार रुपये में ख़रीदी थी और तक़रीबन एक साल पहले मैंने उसमें 50 हज़ार रुपये का सामान ख़रीद कर भरा था, जिसमें से तक़रीबन 20 हज़ार रुपये का सामान क़र्ज़ लिया था, जो अब मैंने अदा कर दिया है। उस दुकान से मुझको जो आमदनी होती है मैं वह पूरी दुकान ही में लगा देता हूँ, मार्केट के हिसाब से मेरी दुकान की क़ीमत एक लाख रुपये से ज़्यादा है, और उसमें जो सामान है उसकी क़ीमत भी 60 या 65 हज़ार रुपये बनती है, रमज़ान का महीना आने वाला है, आपसे सवाल यह है कि मैं उस पर ज़कात किस हिसाब से अदा करूँ? दुकान की आमदनी से मैं कुछ ख़र्च नहीं करता।

जवाबः दुकान में जितनी मालियत का सामान है उसकी क़ीमत लगाकर आपके ज़िम्मे अगर कुछ क़र्ज़ हो उसको निकाल दिया करें और बाक़ी जितनी रक़म बचे उसका चालीसवाँ हिस्सा ज़कात में अदा कर दिया करें, दुकान की इमारत, बारदाने और फ़र्नीचर वग़ैरह पर ज़कात नहीं, सिर्फ़ बेचे जाने वाले माल पर ज़कात है।

इस्तेमाल शुदा चीज़ ज़कात के तौर पर देना

सवालः एक शख़्स एक चीज़ छह महीने तक इस्तेमाल करता है, छह महीने इस्तेमाल के बाद वही चीज़ अपने दिल में ज़कात की नीयत करके आधी क़ीमत पर बग़ैर बताए मुस्तहिक़ को दे देता है, तो ज़कात अदा हो जाएगी या नहीं?

जवाबः अगर बाज़ार में फ़रोख़्त की जाए और उतनी क़ीमत मिल जाए तो ज़कात अदा हो जाएगी।

न बिकने वाली चीज़ ज़कात में देना

सवालः एक दुकानदार से एक चीज़ नहीं बिकती, वह चीज़ ज़कात में दी जा सकती है या नहीं? और क़बूल होगी भी या नहीं?

जवाबः रद्दी चीज़ ज़कात में देना इख़्लास के ख़िलाफ़ है, लेकिन उस चीज़ की जितनी मालियत बाज़ार में हो उसके देने से उतनी ज़कात अदा हो जाएगी।

सामान और चीज़ों की शक्ल में ज़कात की अदायेगी

सवालः क्या ज़कात की रक़म मुस्तहिक़ लोगों को सामान और चीज़ों की शक्ल में भी दी जा सकती है?

जवाबः दी जा सकती है, लेकिन उसमें यह एहतियात मलहूज़ रहे कि रद्दी क़िस्म की चीज़ें ज़कात में न दी जाएँ।

ज़कात की रक़म से मुस्तहिक़ लोगों के लिए कारोबार करना

सवालः ज़कात की इमदाद की तक़सीम के बारे में एक नज़रिया यह सामने आया है कि यह रक़म मुस्तहिक़ लोगों को देने के बजाये उससे मुस्तहिक़ लोगों के हक़ में किसी ज़िम्मेदार फ़र्द की निगरानी में उद्योग की क़िस्म का कोई कारोबार कर दिया जाए ताकि उससे मुनाफ़ा हासिल हो और ग़रीबों को रोज़गार भी मुहैया करके मुस्तहिक़ लोगों को जल्दी या देर से उन्हें साहिबे निसाब लोगों के बराबर ला खड़ा किया जाए, जबकि मैंने एक दीनी और दुनियावी उलूम दोनों में काफ़ी महारत और मालूमात रखने वाले एक कोने में बैठे बुज़ुर्ग से यह सुना है कि ज़कात की रक़म देने वाले अफ़राद से मुस्तहिक़ लोगों को डायरेक्ट मिलनी चाहिए, किसी तीसरे फ़र्द को उन दोनों के दरमियान न तो रोक होने की इजाज़त है और न उस रक़म को मुस्तहिक़ आदमी के पास पहुँचने से पहले उससे किसी क़िस्म का फ़ायदा हासिल करने की कोशिश करने का इख़्तियार है, चाहे वह मुस्तहिक़ लोगों के हक़ में ही क्यों न हो। इन दोनों नज़रियों (धारणाओं और सोच) के सही या ग़लत होने के बारे में ज़रूरी वज़ाहत फ़रमाएँ।

जवाबः उस बुज़ुर्ग की यह बात सही है कि ज़कात की रक़म का जब तक किसी फ़क़ीर मोहताज को मालिक नहीं बना दिया जाएगा ज़कात अदा नहीं होगी, उस रक़म का मालिक बना देने के बाद अगर उनकी इजाज़त और वकील

बनाने से ऐसा कोई इन्तिज़ाम किया जाए जो आपने लिखा है तो दुरुस्त है।

ज़कात की रक़म से ग़रीबों के लिए कारख़ाना लगाना

सवालः क्या ज़कात की रक़म से मिल और औद्योगिक कारख़ाने लगाए जा सकते हैं ताकि ग़रीबों व नादार और ज़कात के मुस्तहिक़ लोगों की बेहतरीन और मुस्तक़िल तौर पर मदद की जा सके।

जवाबः ज़कात की अदायेगी के लिए फ़क़ीर को मालिक बनाना शर्त है, औद्योगिक कारख़ाना लगाने से ज़कात अदा नहीं होगी, हाँ! अगर कारख़ाना लगाकर एक फ़क़ीर को या चन्द ग़रीबों को आप उसका मालिक बना देते हैं, जितनी मालियत का वह कारख़ाना है, उतनी मालियत की ज़कात अदा हो जाएगी।

क़र्ज़ दी हुई रक़म में ज़कात की नीयत करने से ज़कात अदा नहीं होती

सवालः हमने किसी ग़रीब और परेशान-हाल व ज़रूरत-मन्द की माली मदद की, उसने उधार रक़म माँगी थी उसकी ख़स्ता हालत के पेशे नज़र हमने माली मदद की, अब वह मुक़र्ररा मियाद में क़र्ज़ ली हुई रक़म को आज तक वापस नहीं कर सका, न ही सूरत दिखाई देती। अब क्या हम क़र्ज़ दी हुई रक़म को उसके लिये ज़कात की नीयत करके छोड़ दें

तो ज़कात अदा हो जाएगी? जबकि हमने उसे रक़म उधार दी थी तो ज़कात की नीयत नहीं की थी, न ही यह ख़्याल था कि वह रक़म हमको वापस नहीं करेगा, और हज़्म कर जाएगा।

जवाबः जो सूरत आपने लिखी है उससे ज़कात अदा नहीं होगी, क्योंकि ज़कात अदा करते वक़्त नीयत करना शर्त है।

क़र्ज़ दी हुई रक़म पर ज़कात सालाना दें चाहे क़र्ज़ की वुसूली पर एकमुश्त

सवालः मैंने कुछ रक़म एक दोस्त को क़र्ज़ के तौर पर दी हुई है, क्या मैं उस पर हर साल ज़कात दूँ या जब वह वुसूल हो जाए तब दूँ? वाज़ेह रहे कि रक़म को दिए हुए कई साल हो गए हैं और अब उस दोस्त का कारोबार अच्छा चल रहा है, मेरे दो चार दफ़ा माँगने पर भी उसने रक़म वापस नहीं की, टाल देता है कि अभी नहीं है। एक बिल फंसा हुआ है, जब मिल गया तो फ़ौरन अदा कर दूँगा।

जवाबः इस क़र्ज़ की रक़म पर ज़कात तो आपके ज़िम्मे हर साल वाजिब है, अलबत्ता यह आपको इख़्तियार है कि साल के साल अदा कर दिया करें या जब वह क़र्ज़ वुसूल हो तो गुज़िश्ता (पीछे गुज़रे) तमाम सालों की ज़कात वक़्त पर अदा करें।

मक़रूज़ आदमी सोने की ज़कात किस तरह अदा करे

सवालः मेरे पास ज़ेवर 9 तोले है, उसकी ज़कात के

मुताल्लिक़ पूछना चाहता हूँ। ज़कात कितने तोले पर लागू होती है, और कितने तोले के बाद ज़कात देनी पड़ती है? फ़र्ज़ करो कि 5 तोले पर ज़कात है तो मुझे बक़ाया 4 तोले की ज़कात देनी पड़ेगी या टोटल 9 तोले की देनी होगी? मैं सरकारी इदारे में मुलाज़िम हूँ और मुझे काफ़ी क़र्ज़ा भी देना है, इस सूरत में ज़कात का तरीक़ा क्या है? जबकि मेरी तन्ख़्वाह भी ज़्यादा नहीं है, मुश्किल से गुज़ारा होता है।

जवाबः आपके ज़िम्मे जो क़र्ज़ा है उसको निकालने बाद अगर आपके पास साढ़े सात तोले सोना बाक़ी रह जाता है तो आप पर उस बाक़ी बचे की ज़कात वाजिब है।

ज़कात से मुलाज़िम को तन्ख़्वाह देना जायज़ नहीं, इमदाद के लिए ज़कात देना जायज़ है

सवालः मेरे यहाँ एक मुलाज़िम (नौकर) है, जिसने तन्ख़्वाह में इज़ाफ़े का मुतालबा किया तो मैंने ज़कात की नीयत से इज़ाफ़ा कर दिया। अब वह यह समझता है कि तन्ख़्वाह में इज़ाफ़ा हुआ, उसी के बदले मैं काम कर रहा हूँ। क्या इस तरह दी हुई मेरी ज़कात अदा हुई या नहीं?

जवाबः मुलाज़िम की तन्ख़्वाह तो उसके काम का मुआवज़ा (बदला) है, और जब आपने तन्ख़्वाह बढ़ाने के नाम पर इज़ाफ़ा किया तो वह भी काम के मुआवज़े में हुआ, इसलिए उससे ज़कात अदा नहीं हुई। जो तन्ख़्वाह उसके साथ तय हो वह अदा करने के अलावा अगर उसको ज़रूरत-मन्द और मोहताज समझ कर ज़कात दे दी जाए तो ज़कात अदा हो जाएगी।

मुलाज़िम को एडवांस दी हुई रक़म की ज़कात की नीयत दुरुस्त नहीं

सवालः मैंने अपने मुलाज़िम को कुछ रक़म बतौर एडवांस वापसी की शर्त पर दी, लेकिन मैं देखता हूँ कि यह रक़म अदा नहीं कर सकेगा, अगर मैं ज़कात की नीयत कर लूँ तो क्या अदा हो जाएगी?

जवाबः ज़कात की नीयत देते वक़्त करनी ज़रूरी है, बाद में की हुई नीयत काफ़ी नहीं, इसलिए आप रक़म को ज़कात की मद में दाख़िल नहीं कर सकते, हाँ यह कर सकते हैं कि ज़कात की नीयत से उसको उतनी रक़म देकर फिर चाहे उसी वक़्त अपना क़र्ज़ वुसूल करें।

आईन्दा के मज़दूरी के ख़र्चे ज़कात से निकालना दुरुस्त नहीं

सवालः एक शख़्स मकान बनवा रहा है, मज़दूर काम कर रहे हैं, उस दौरान ज़कात देने का वक़्त आता है, क्या वह उन मज़दूरों की उजरत अलग रखकर ज़कात निकालेगा, यानी अगर फ़र्ज़ किया 50 हज़ार में मकान बनने का अन्दाज़ा है तो 50 हज़ार अलग रहने दे और उसकी ज़कात न निकाले? क्योंकि मैंने पढ़ा है कि अगर नौकर हैं किसी के तो वह उनकी तन्ख़्वाह उन्हें देकर फिर ज़कात दे।

जवाबः जितना ख़र्च मकान पर उठ चुका है और उसके ज़िम्मे मज़दूरी वाजिबुल-अदा हो गई है, उसको ज़कात से

अलग कर सकता है, लेकिन आगे जो ख़र्चे होंगे या मज़दूरी वाजिब होगी उसको निकालना दुरुस्त नहीं।

ज़कात की रक़म से मस्जिद का जनरेटर ख़रीदना जायज़ नहीं

सवालः एक आदमी अपनी ज़कात की रक़म से मस्जिद का जनरेटर ख़रीद सकता है या नहीं?

जवाबः ज़कात की रक़म से मस्जिद का जनरेटर नहीं ख़रीदा जा सकता, अलबत्ता यह हो सकता है कि कोई ग़रीब आदमी क़र्ज़ लेकर जनरेटर ख़रीद कर मस्जिद को दे दे और ज़कात की रक़म उसको क़र्ज़ा अदा करने के लिए दे दी जाए।

पैसे न हों तो ज़ेवर बेचकर ज़कात अदा करे

सवालः ज़कात देना सिर्फ़ बीवी पर फ़र्ज़ है, वह तो कमाकर नहीं लाती, फिर वह किस तरह ज़कात दे? जबकि शौहर उसको सिर्फ़ उतनी ही रक़म देता है जो घर की ज़रूरतों के लिए होती है।

जवाबः अगर पैसे न हों तो ज़ेवर बेच करके ज़कात दिया करे, या ज़ेवर ही का चालीसवाँ हिस्सा देना मुम्किन हो तो वह दे दिया करे।

सवालः ज़ैद की बीवी के पास सोने के ज़ेवरात हैं जिनका वज़न नहीं कराया है, क्या उसकी ज़कात बीवी को देनी है या शौहर को? जबकि तमाम ज़रूरतें शौहर ख़ुद पूरी करता है और बीवी को बहुत कम रक़म जेब ख़र्च के लिए देता है।

कई बार शौहर के पास साल के आख़िर में इतने पैसे नहीं होते कि ज़कात अदा की जाए। शौहर की आमदनी स्कूल के उसताद की तन्ख़्वाह और ट्यूशन वग़ैरह पर है, शौहर की कुछ रक़म नफ़ा व नुक़सान के कारोबार में लगी हुई है, जिस पर ज़कात दे दी जाती है, क्या फिर भी सोने के ज़ेवरात पर ज़कात देनी होगी?

जवाबः सोने का निसाब साढ़े सात तोले है, अगर ज़ैद की बीवी के पास इतना सोना है जिसकी वह ख़ुद मालिक है तो ज़कात उस पर फ़र्ज़ है, अगर पैसे न हों तो ज़ेवरात फ़रोख़्त करके ज़कात दी जाए।

बीवी ख़ुद ज़कात अदा करे चाहे ज़ेवर बेचना पड़े

सवालः मेरे तमाम ज़ेवरात की संख्या तक़रीबन आठ तोले सोना है, लेकिन उसके अ़लावा मेरे पास न तो क़ुरबानी के लिए और न ही ज़कात के लिए कुछ रक़म है, लिहाज़ा मैंने एक सेट अपनी बच्ची के नाम रख छोड़ा है, वह अब इस्तेमाल में भी नहीं, और शौहर ज़कात देने पर राज़ी नहीं, कहता है तुम्हारा ज़ेवर है तुम जानो, मगर उसमें मेरी सिर्फ़ इतनी मिल्कियत है कि पहन सकूँ। तब्दील या फ़रोख़्त भी नहीं कर सकती। अब बच्ची वाले ज़ेवर की ज़कात कौन देगा? भाई के दिए हुए ढाई हज़ार रुपये पर ज़कात निकाल देती हूँ।

जवाबः जो ज़ेवर आपने बच्ची की मिल्क कर दिया है वह जब तक नाबालिग़ है उस पर ज़कात नहीं, लेकिन उसकी मिल्कियत कर देने के बाद आपके लिए उसका इस्तेमाल जायज़ नहीं, बाक़ी ज़ेवर अगर नक़दी मिलाकर ज़कात की हद

तक पहुँचता है तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ है। अगर नक़द रुपया न हो तो ज़ेवर फ़रोख़्त करके ज़कात देना ज़रूरी है। अगर शौहर आपके कहने पर आपकी तरफ़ से ज़कात अदा कर दिया करे तो ज़कात अदा हो जाएगी मगर उसके ज़िम्मे फ़र्ज़ नहीं, फ़र्ज़ आपके ज़िम्मे है।

ज़कात अदा करने की गुन्जाईश न हो तो इतना ज़ेवर ही न रखा जाए जिस पर ज़कात फ़र्ज़ हो, यह जवाब तो उस सूरत में है कि ज़ेवर आपकी मिल्कियत हो, लेकिन आपने जो लिखा है कि "उसमें मेरी सिर्फ़ इतनी मिल्कियत है कि पहन सकूँ, तब्दील या फ़रोख़्त भी नहीं कर सकती" इस जुमले से मालूम होता है कि ज़ेवर दर असल शौहर की मिल्कियत है और आपको सिर्फ़ पहनने के लिए दिया गया है, अगर यही मतलब है तो उस ज़ेवर की ज़कात आपके शौहर पर फ़र्ज़ है, आप पर नहीं।

ग़रीब माँ निसाब भर सोने की ज़कात ज़ेवर बेचकर दे

सवालः वालिदा साहिबा के पास क़ाबिले ज़कात ज़ेवर है, उनकी अपनी कोई आमदनी नहीं बल्कि औलाद पर गुज़ारा है, इस सूरत में ज़कात उनके ज़ेवर पर वाजिब है या नहीं?

जवाबः ज़कात वाजिब है, बशर्तेकि यह ज़ेवर निसाब की मालियत को पहुँचता हो, ज़ेवर बेचकर ज़कात दी जाए।

शौहर के मरने पर ज़कात किस तरह अदा करें

सवालः हमारी एक अज़ीज़ा (रिश्तेदार) हैं, उनके शौहर

मर गए हैं और उन पर बारह हज़ार का क़र्ज़ा है, जबकि उनके पास थोड़ा बहुत सोना है, आप से यह पूछना है कि क्या उनको ज़कात देनी चाहिए? अगर देनी है तो कितनी?

जवाबः शौहर का छोड़ा हुआ तर्का सिर्फ़ बीवी का नहीं बल्कि सब से पहले उसके शौहर का क़र्ज़ा अदा किया जाए, फिर उसे शरई हिस्सों पर तक़सीम किया जाए और फिर उन वारिसों में से जो बालिग़ हों उनका हिस्सा निसाब को पहुँचता हो तो उस पर ज़कात होगी।

अगर नक्दी न हो तो पिछले और आने वाले सालों की ज़कात में ज़ेवर दे सकते हैं

सवालः अगर कोई लड़की दहेज में अपने आप इतना ज़ेवर लाए जिसकी ज़कात की रक़म अच्छी ख़ासी बनती हो और शौहर की आमदनी से साल में इतनी रक़म न बचती हो सकती हो तो बताया जाए ज़कात किस तरह अदा की जाए?

जवाबः उन ज़ेवरात का कुछ हिस्सा फ़रोख़्त कर दिया जाए या कई साल की ज़कात में दे दिया जाए। यानी उसकी क़ीमत लगाई जाए और ज़ेवरात की ज़कात जितने साल की उसके बराबर हो उतने साल की नीयत करके वह ज़ेवर ज़कात में दे दिया जाए।

दुकान में मौजूद माले तिजारत पर ज़कात और अदायेगी का तरीक़ा

सवालः मैं किताबों और स्टेशनरी की दुकान करता हूँ।

सामान की मालियत तक़रीबन बारह से पन्द्रह हज़ार तक होगी, दुकान किराये की है, आया यह दुकान का सामान ज़कात की अदायेगी के क़ाबिल है या नहीं? यानी क्या इस माले तिजारत पर ज़कात फ़र्ज़ है?

जवाबः दुकान का जो भी माल फ़रोख़्त किया जाता है, अगर उसकी मालियत साढ़े बावन तोले चाँदी की मालियत को पहुँचती हो तो उस माल पर ज़कात फ़र्ज़ होगी।

सवालः अगर उस माल पर ज़कात फ़र्ज़ है तो चूँक स्टेशनरी का सामान बहुत सारी चीज़ों पर मुश्तमिल है और मैं रोज़ाना ख़रीदारी और फ़रोख़्त भी करता हूँ इसलिए उसका हिसाब किताब नामुम्किन सा हो जाता है, तो क्या अन्दाज़े से उसकी क़ीमत लगाकर ज़कात अदा कर सकता हूँ?

जवाबः रोज़ाना का हिसाब रखने की ज़रूरत नहीं, साल में एक तारीख़ मुक़र्रर कर लीजिए- जैसे पहली रमज़ान को पूरी दुकान के क़ाबिले फ़रोख़्त सामान का जायज़ा लेकर उसकी मालियत का हिसाब (निर्धारण) कर लिया जाए और उसके मुताबिक़ ज़कात अदा कर दी जाए। जिस तारीख़ को आपने दुकान शुरू की थी, हर साल उस तारीख़ को हिसाब कर लिया कीजिए।

इन्कम टैक्स अदा करने से ज़कात अदा नहीं होती

सवालः एक शख़्स साहिबे निसाब है, अगर वह शरह (हिसाब) के मुताबिक़ अपनी जायदाद, रक़म वग़ैरह से ज़कात

अदा करता है, तो क्या शरई तौर पर वह हुकूमत के बनाये हुए इन्कम टैक्स सिस्टम अदा करने से बरी हो जाता है? अगर वह सिर्फ़ इन्कम टैक्स अदा करता है और ज़कात नहीं देता तो उसके लिए क्या हुक्म है? तथा मौजूदा व्यवस्था में वह क्या तरीक़ा इख़्तियार करे?

जवाबः इन्कम टैक्स मुल्की ज़रूरतों के लिए हुकूमत की तरफ़ से मुक़र्रर है, जबकि ज़कात एक मुसलमान के लिए फ़रीज़ा-ए-खुदावन्दी और इबादत है, इन्कम टैक्स अदा करने से ज़कात अदा नहीं होती, बल्कि ज़कात का अलग अदा करना फ़र्ज़ है।

मालिक बनाए बग़ैर फ़्लेट रहने के लिए देने से ज़कात अदा नहीं होगी

सवालः पूछना यह है कि ज़कात की मद से तामीर किए गए फ़्लेट निम्नलिखित शर्तों पर ज़कात के मुस्तहिक़ लोगों को दिए गए हैं, तो ज़कात देने वालों की ज़कात अदा हो जाती है या नहीं?

शर्तेंः 1ः यह फ़्लेट कम से कम पाँच साल तक आप किसी के हाथ बेच नहीं सकेंगे (ज़्यादा से ज़्यादा की कोई हद नहीं)।

2ः संबन्धित फ़्लेट आपको अपने इस्तेमाल के लिए दिया जा रहा है, इसमें आप किरायेदार नहीं रखेंगे, पगड़ी पर नहीं दे सकेंगे और किसी दूसरे शख़्स को इस्तेमाल के लिए भी नहीं दे सकेंगे।

3: आपने फ़्लेट अगर किसी को पगड़ी पर दिया या किरायेदार रखा तो उसकी इत्तिला जमाअ़त को मिलने पर आपके फ़्लेट का हक़ मन्सूख़ कर दिया जाएगा।

4: फ़्लेट के रख-रखाव और मरम्मत की रक़म जो जमाअ़त मुक़र्रर करे वह हर महीने अदा करके उससे रसीद हासिल करनी पड़ेगी।

5: फ़्लेट के बदले में किसी दूसरे क़ब्ज़ेदार से कोई और मकान बदली नहीं किया जा सकेगा।

6: इस इमारत की छत जमाअ़त के क़ब्ज़े में रहेगी।

7 : मुस्तक़बिल (भविष्य) में फ़्लेट बेचने या छोड़ने की सूरत में जमाअ़त से "नो ऑब्जेकशन सर्टिफ़िकेट" हासिल करने के बाद मज़ीद कार्रवाई हो सकेगी।

8: ऊपर बयान की गई शर्तों के अ़लावा जमाअ़त की जानिब से अ़मल में आने वाले नये अहकामात और शर्तों को मानकर उन पर भी अ़मल करना होगा।

इन बयान की गई शर्तों और पाबन्दियों की ख़िलाफ़वर्ज़ी करने वाले मिम्बर से जमाअ़त फ़्लेट ख़ाली करा सकेगी और फ़्लेट में रहने वाले को उस पर अ़मल करना और क़ानूनी हक़ छोड़ना होगा।

(उपर्युक्त इक़रार नामे की तमाम शर्तों और हिदायतों को पढ़कर समझ कर मन्ज़ूर करता और राज़ी ख़ुशी से इस पर अपने दस्तख़त कर देता हूँ)।

मेहरबानी करके जवाब बज़रिये अख़बार जंग इनायत फ़रमाएँ ताकि सब जमाअ़तों को पता चल जाए। क्योंकि यह सिलसिला सिन्ध, हैदराबाद और कराची की मैमन बिरादरी में

आ़म चल पड़ा है, और इसमें करोड़ों रुपये ज़कात की मद में लोगों से वुसूल करके लगाए जा रहे हैं।

जवाबः ज़कात तब अदा होती है जब मोहताज (ग़रीब और ज़कात के मुस्तहिक़) को माले ज़कात का मालिक बना दिया जाए और ज़कात देने वाले का उससे कोई ताल्लुक़ और वास्ता न रहे। आपके ज़िक्र किये हुए शराईत-नामे में जो शर्तें ज़िक्र की गई हैं वह आ़रियत (यानी किसी को कोई चीज़ मांगे के तौर पर देने) की हैं, तम्लीक (मालिक बनाने) की नहीं। लिहाज़ा इन शराईत के साथ अगर किसी को ज़कात की रक़म से फ़्लेट बनाकर दिया गया तो ज़कात अदा नहीं होगी, ज़कात के अदा होने की सूरत यही है कि जिनको ये फ़्लेट दिए जाएँ उनको मालिक बना दिया जाए और मिल्कियत के काग़ज़ात समेत उनको मालिकाना हुक़ूक़ दे दिए जाएँ कि ये लोग उन फ़्लेटों में जैसे चाहें मालिकाना तसर्रुफ़ (अ़मल-दख़ल) करें और जमाअ़त की तरफ़ से उन पर कोई पाबन्दी न हो। अगर उनको मालिकाना हुक़ूक़ न दिए गए तो ज़कात देने वालों की ज़कात अदा नहीं होगी, और उन पर लाज़िम होगा कि अपनी ज़कात दोबारा अदा करें।

किन लोगों को ज़कात दे सकते हैं

(ज़कात अदा करने के मसारिफ़)

ज़कात के मुस्तहिक़ लोग

सवालः किन-किन लोगों को ज़कात देना जायज़ है और किन-किन को नाजायज़?

जवाबः अपने माँ बाप और अपनी औलाद को ज़कात देना जायज़ नहीं, इसी तरह शौहर बीवी एक दूसरे को ज़कात नहीं दे सकते हैं। जो लोग खुद साहिबे निसाब हों उनको ज़कात देना जायज़ नहीं। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ख़ानदान (हाशमी हज़रात) को ज़कात देने का हुक्म नहीं, बल्कि अगर वे ज़रूरत-मन्द हों तो उनकी मदद ग़ैर-ज़कात से लाज़िम है। अपने भाई बहन चचा भतीजे मामूँ भाँजे को ज़कात देना जायज़ है, मज़ीद तफ़सील खुद पूछिये या किसी किताब में पढ़ लीजिए।

ज़कात किसे दी जाये

सवालः ज़कात की तक़सीम किन-किन क़ौमों पर हराम है, जबकि हमारे इलाक़े तहसील पिलन्दरी बल्कि पूरे आज़ाद कशमीर में सय्यिद, मलिक, आवान और लोहार, तरखान, क़ुरैशी वग़ैरह इनके लिए ज़कात हराम क़रार देकर बन्द कर दी गई। अलबत्ता सैयद हज़रात के लिए ज़कात लेना जायज़

नहीं, दीगर दो क़ौमें जिनमें क़ुरैशी कहलाने वाले तरखान लोहार और आवान मलिक शामिल हैं, ज़कात के हक़दार हैं या नहीं, बराहे करम इसकी भी वज़ाहत करें कि सैयद घराने के अ़लावा हाजत-मन्द लोग जैसे यतीम बेवा माज़ूर ज़कात लेने के हक़ादर हैं या नहीं?

जवाबः ज़कात नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ख़ानदान के लिए हलाल नहीं और नबी पाक के ख़ानदान से मुराद हैं आले अ़ली, आले अ़क़ील, आले जाफ़र, आले अ़ब्बास और आले हारिस बिन अ़ब्दुल-मुत्तलिब। पस जो शख़्स इन पाँच बुज़ुर्गों की नस्ल से हो उसको ज़कात नहीं दी जा सकती, अगर वे ग़रीब और ज़रूरत-मन्द हों तो दूसरे फ़न्ड से उनकी ख़िदमत करनी चाहिए।

सैयद और हाशमियों की मदद ज़कात के अ़लावा दूसरी रक़म से की जाए

सवालः इस्लाम बराबरी और अ़दल व हिक्मत का दीन है, इस्लाम ग़ैर-मुस्लिमों से जिज़्या (इस्लामी हुकूमत में रहने वाले ग़ैर-मुस्लिमों से उनकी हिफ़ाज़त के बदले टैक्स) वुसूल करता है, तो उन्हें अपने ज़ेरे साया सुरक्षा फ़राहम करता है। इस्लाम ज़कात देने का हुक्म देता है और हुक्म देता है कि उसे उम्मत (हाशमी हज़रात के अ़लावा) के ग़रीबों मिस्कीनों यतीमों और बेवाओं पर ख़र्च किया जाए। यह इस्लाम का एक हुक्म है जिस पर अ़मल करना वाजिब है, लेकिन मेरा सवाल यह है कि हमारा मज़हब हाशमी उम्मत के ग़रीबों, बेवाओं, यतीमों, नादारों, मिस्कीनों और मोहताजों ग़रीब तालिबे-इल्मों

के लिए क्या माली सुरक्षा फ़राहम करता है?

जवाबः हाशमी नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ख़ानदान है, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने लिए और अपने मुताल्लिक़ीन के लिए ज़कात को ममनूअ़ (वर्जित) क़रार दिया है। ये हज़रात अगर ज़रूरत-मन्द हों तो ज़कात के अ़लावा दूसरे फ़न्ड से उनकी ख़िदमत करनी चाहिये और नबी पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की क़राबत (रिश्ते) का लिहाज़ रखते हुए उनकी ख़िदमत करना बड़े अज्र का मूजिब (सबब) है।

सैयद हज़रात को ज़कात क्यों नहीं दी जाती?

सवालः मौलाना साहिब! मैंने अक्सर किताबों में पढ़ा है और सुना भी है कि सादात (सैयद लोगों) को ज़कात नहीं देनी चाहिए, ऐसा क्यों है?

जवाबः ज़कात लोगों के माल का मैल है और हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की आल (औलाद) को इससे मुलव्वस करना मुनासिब न था, वे अगर ज़रूरत-मन्द हों तो पाक माल से उनकी मदद की जाए। साथ ही अगर आपकी आल को ज़कात देने का हुक्म होता तो एक नावाक़िफ़ को वस्वसा (ख़्याल और गुमान) हो सकता था कि यह ख़ूबसूरत निज़ाम अपनी औलाद ही के लिए तो (खुदा की पनाह) जारी नहीं फ़रमा गए? तथा इसका एक मनोवैज्ञानिक पहलू भी है और वह यह कि अगर आपकी आल को ज़कात देना जायज़ होता तो लोग आपसे रिश्तेदारी की बिना पर उन्हीं को तरजीह देते, ग़ैर-सैयद को ज़कात देने पर उनका दिल मुत्मईन न

होता, इससे दूसरे फ़ुक़रा और ग़रीबों को शिकायत पैदा होती।

सैयदों को ज़कात क्यों न दी जाये

सवालः सुन्नी फ़िक़े में सैयदों पर ज़कात ख़ैरात और सदक़े के इस्तेमाल की मनाही है। सवाल यह है कि क्या इस फ़िक़े में ग़रीब सैयद नहीं होते? और अगर होते हैं तो उनकी हाजत पूरी करने के लिए फ़िक़ा सुन्नी में कौनसा तरीक़ा है? और इस सिलसिले में हुकूमते पाकिस्तान के ज़कात और उश्र में कोई गुन्जाईश है या नहीं?

जवाबः यह मसला सुन्नी फ़िक़े का नहीं बल्कि ख़ुद नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद फ़रमाया हुआ है, कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आपकी आल के लिए ज़कात और सदक़ा हलाल नहीं, क्योंकि यह लोगों के माल का मैल-कुचैल है, नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को और आपकी आल को अल्लाह तआ़ला ने इस मैल-कुचैल से पाक रखा है, सैयद अगर ग़रीब हों तो उनकी ख़िदमत में इ़ज़्ज़त व एहतिराम से हदिया पेश करना चाहिए। हुकूमत को भी चाहिए कि सैयदों की कफ़ालत (परवरिश और ज़रूरतें पूरी करना) सदक़ाती फ़न्ड के अ़लावा दूसरे फ़न्डों से करे।

सैयद की बीवी को ज़कात

सवालः हमारे एक अ़ज़ीज़ जो कि सैयद हैं, जिस्मानी तौर पर बिल्कुल माज़ूर होने के सबब कमाने के क़ाबिल नहीं हैं, उनके घर का ख़र्चा उनकी बीवी जो कि ग़ैर-सैयद हैं बच्चों को

ट्यूशन पढ़ाकर और कुछ क़रीबी अ़ज़ीज़ों की मदद से चलाती हैं। सवाल यह है कि चूँकि उनकी बीवी ग़ैर-सैयद हैं और घर की कफ़ील हैं तो बावजूद उसके शौहर और बच्चे सैयद हैं, उनको ज़कात दी जा सकती है या नहीं?

जवाबः बीवी अगर ग़ैर-सैयद है और वह ज़कात की मुस्तहिक़ है तो उसको ज़कात दे सकते हैं, उस ज़कात की मालिक होने के बाद वह अगर चाहे तो अपने शौहर और बच्चों पर ख़र्च कर सकती है।

सादात लड़की की औलाद को ज़कात

सवालः आ़बिदा की शादी हामिद के साथ हुई थी, जिस से उसके दो बच्चे हैं। कुछ अ़र्सा के बाद हामिद ने आ़बिदा को तलाक़ दे दी, बच्चे आ़बिदा के पास हैं जो मेह़नत करके उनकी परवरिश करती है। हामिद बच्चों की परवरिश के लिए उसको कुछ नहीं देता, आ़बिदा ख़ानदाने सादात से ताल्लुक़ रखती है और उसके ये बच्चे सिद्दीक़ी हैं, आ़बिदा के अ़ज़ीज़, रिश्तेदार, बहन भाई या माँ बाप उन बच्चों की परवरिश वग़ैरह के लिए ज़कात का रुपया आ़बिदा को दे सकते हैं या नहीं? कि वह सिर्फ़ बच्चों के ख़र्च में लाए। क्योंकि आ़बिदा के लिए तो ज़कात लेना जायज़ नहीं है, शरई एतिबार से इस मसले पर रोशनी डालें।

जवाबः ये बच्चे सैयद नहीं बल्कि सिद्दीक़ी हैं, इसलिए इन बच्चों को ज़कात देना सही है और आ़बिदा अपने इन बच्चों के लिए ज़कात वुसूल कर सकती है, अपने लिए नहीं।

ज़कात का सही मसरफ़

सवालः क्या ज़कात और उश्र की रक़म को मुल्की रक्षा पर या इन्डस्ट्री लगाने पर ख़र्च किया जा सकता है या नहीं? आज तक हम लोग यही सुनते आए हैं कि ज़कात व उश्र की रक़मों को इन चीज़ों पर नहीं ख़र्च किया जा सकता, लेकिन मियाँ.... साहिब के एक अख़बारी बयान ने हमें हैरान ही नहीं बल्कि परेशान भी कर दिया।

मियाँ साहिब फ़रमाते हैं:

> "शरई नुक़्ता-ए-निगाह से हुकूमत ज़कात व उश्र की रक़मों को मुल्की रक्षा पर ख़र्च करने का हक़ रखती है, ज़कात व उश्र के मसारिफ़ के मुताल्लिक़ जंग अख़बार के रिपोर्टर के सवाल पर उन्होंने कहा कि मज़हबी नुक़्ता-ए-नज़र से मुल्की रक्षा की ज़रूरत पूरी करने के लिए अगर वसाईल (संसाधन) मौजूद न हों या कम हों तो फिर इस मक़सद के लिए ज़कात व उश्र को इस्तेमाल किया जा सकता है। इसी तरह तब्लीग़े दीन और दीन के प्रचार व प्रसार के लिए ज़कात व उश्र को भरपूर तरीक़े से इस्तेमाल किया जा सकता है। क्योंकि इस सिलसिले में 'फ़ी सबीलिल्लाह' (अल्लाह के रास्ते) की मद मौजूद है।"

उन्होंने कहा कि ज़कात की रक़मों से मुल्क में इन्डस्ट्री भी लगाई जा सकती है, जिसमें ग़रीबों, यतीमों और मुस्तहिक़ लोगों को नौकरियाँ मिलनी चाहिएँ। लेकिन उस इन्डस्ट्री की स्थापना के साथ एक शर्त भी ज़रूरी है और वह यह कि खाते-पीते अफ़राद को उसमें नौकरी न दी जाए। (दैनिक जंग

कराची, 10 दिसम्बर 1984 ई.)

क्या मियाँ साहिब का यह नुक़्ता-ए-नज़र क़ुरआन व सुन्नत और फ़िक़ा हनफ़ी के मुताबिक़ है? दलाईल से इसकी वज़ाहत फ़रमाएँ।

जवाबः ज़कात फ़ुक़रा व मसाकीन के लिए है, क़ुरआन करीम ने "फ़ी सबीलिल्लाह" की जो मद ज़िक्र की है उसमें फ़क्र (ग़ुर्बत व तंगदस्ती) बतौर शर्त बयान की गयी है, यानी जो मुजाहिद नादार हो उसको उसकी ज़रूरतें ज़कात की मद में सौंपी जा सकती हैं, जिनका वह मालिक हो जाए। आ़म तरीक़े से मुल्की रक्षा, तालीम, सेहत और आ़म जनता के फ़ायदों की मदों पर ज़कात का पैसा ख़र्च करना सही नहीं, जो लोग इस क़िस्म के फ़तवे सादिर करते हैं उनके मुताबिक़ ज़कात और टैक्स में कोई फ़र्क़ नहीं रह जाता।

ज़कात लेने वाले के ज़ाहिर का एतिबार होगा

सवालः रिश्तेदारों, अहबाब और क़रीबी लोगों में जो बज़ाहिर ज़कात के मुस्तहिक़ नज़र आते हैं, यह किस तरह तस्दीक़ की जाए कि ये साहिबे निसाब हैं या नहीं?

जवाबः ज़ाहिर का एतिबार है, पस अगर ज़ाहिरे हाल के मुताबिक़ दिल मानता है कि यह मुस्तहिक़ होगा तो उसको दे दी जाए।

मामूली आमदनी वाले रिश्तेदार को ज़कात देना जायज़ है

सवालः मेरी एक क़रीबी अ़ज़ीज़ा (रिश्तेदार) हैं, उनके

शौहर एक मामूली हैसियत से काम कर रहे हैं, आमदनी इतनी नहीं कि घर के ख़र्चे अच्छी तरह चल सकें, रिहाईशी मकान भी किराये का है, मालूम यह करना है कि इन हालात में ज़कात व सदक़े की रक़म उन्हें दे सकते हैं या नहीं?

जवाबः अगर वे ज़कात के मुस्तहिक़ हैं तो ज़कात की मद से उनकी मदद करनी चाहिए।

भाई को ज़कात देना

सवालः उलेमा-ए-दीन इस मसले के बारे में क्या फ़रमाते हैं कि अगर अपना हक़ीक़ी (सगा) भाई माज़ूर और बीमार हो और आमदनी का ज़रिया भी न हो तो क्या दूसरा भाई उसको ज़कात दे सकता है?

जवाबः बहन, भाई और चचा मामूँ को ज़कात देना जायज़ है।

भाई और वालिद को ज़कात देना

सवालः अगर कोई शख़्स हिसाब किताब में अपने वालिद और भाईयों से अलग हो और साहिबे हैसियत भी हो, अब अगर यह बेटा वालिद साहिब को ज़कात इस तरह देना चाहे कि अपने ग़रीब मुस्तहिक़ भाई को दे दे और भाई से कह दे कि यह रक़म आप और वालिद दोनों इस्तेमाल में लाएँ। या भाई से कह दे कि यह रक़म क़बूल करके वालिद को देना, जबकि वालिद मुस्तहिक़ भी हो, क्या यह सही है या ऐसी कोई सूरत है कि यह रक़म वालिद को दे दी जाए और ज़कात अदा हो जाए?

जवाबः भाई को ज़कात देना सही है, मगर उससे यह फ़रमाईश करना कि वह फ़ुलाँ शख़्स (जैसे वालिद साहिब) पर ख़र्च करे, ग़लत है। जब उसने भाई को ज़कात दे दी तो वह उसकी मिल्कियत हो गई है, अब वह उसका जो चाहे करे। और अगर भाई को ज़कात देना मक़सूद नहीं, बल्कि वालिद को देना मक़सूद है और भाई महज़ वकील है तो भाई को देने से ज़कात अदा नहीं होगी।

ग़रीब बहन भाईयों को ज़कात देना

सवालः मेरे वालिद साहिब मुद्दत डेढ़ साल पहले इन्तिक़ाल कर चुके हैं और मैं घर में बड़ा हूँ और शादी शुदा हूँ। फ़िलहाल सारे घर की कफ़ालत (देखभाल) भी ख़ुद कर रहा हूँ। घर के अफ़राद कुछ यूँ हैं- एक वालिदा साहिबा, एक बहन साहिबा और तीन अ़दद छोटे भाई हैं, जिनमें एक रोज़गार से लगा है, और दो अभी पढ़ रहे हैं। मेरे ज़िम्मे ज़कात भी वाजिब है, क्या मैं वह ज़कात अपने भाईयों को दे सकता हूँ और बहन साहिबा को? क्योंकि उनका कोई रोज़गार का ज़रिया नहीं है। रहा मसला वालिदा साहिबा वाला तो वह मेरा फ़र्ज़ है और सब ज़िम्मेदारी मैं क़बूल करूँगा।

जवाबः ज़कात बहन भाई को देना जायज़ है।

चचा को ज़कात

सवालः हमारे वालिद साहिब का इन्तिक़ाल हो गया है, और हम सात भाई बहनें हैं, वालिदा है अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल से ज़कात हम पर फ़र्ज़ है और हम ज़कात निकालना चाहते हैं। क्या ज़कात की कुछ रक़म अपने चचा को दे दें?

चचा के माली हालात सही नहीं हैं। हम ज़कात चचा को दे सकते हैं या नहीं, और हम यह भी चाहते हैं कि ज़कात का चचा को इल्म भी न हो।

जवाबः चचा को ज़कात देना जायज़ है और जिसको ज़कात दी जाए उसको यह बताना ज़रूरी नहीं कि यह ज़कात की रक़म है, सिर्फ़ ज़कात की नीयत कर लेना काफ़ी है।

भतीजे या बेटे को ज़कात देना

सवालः मेरे पास मेरी यतीम भतीजी रहती है, क्या मैं ज़कात की रक़म उस पर ख़र्च कर सकती हूँ। दूसरा सवाल यह है कि मैं अपने बेटे को भी ज़कात दे सकती हूँ या नहीं? वह मामूली मुलाज़िम है।

जवाबः बेटा बेटी, पोता पोती और नवासी नवासे को ज़कात देना जायज़ नहीं, भतीजा भतीजी को देना दुरुस्त है।

बीवी का शौहर को ज़कात देना जायज़ नहीं

सवालः (1) आ़म तौर पर बीवी की पूरी ज़िम्मेदारी और ख़र्चा शौहर के ज़िम्मे है। अगर बद-नसीबी से शौहर ग़रीब हो जाए और बीवी मालदार हो तो शरई तौर पर शौहर के बीवी पर क्या हुक़ूक़ आ़यद होते हैं?

(2) उक्त शौहर को बीवी से ज़कात लेकर खाना क्या दुरुस्त है?

जवाबः (1) औ़रत पर शौहर के लिए जो हुक़ूक़ हैं वे शौहर की ग़ुर्बत और मालदारी दोनों में बराबर हैं। शौहर के ग़रीब होने पर बीवी पर शरअ़न् यह हक़ है कि शौहर की ग़ुर्बत के पेशे नज़र सिर्फ़ इस क़द्र रोटी-कपड़े और ख़र्चे का

मुतालबा करे जिसको शौहर बरदाश्त कर सके, अलबत्ता अख़्लाक़ी तौर पर बीवी को चाहिए कि वह अपने माल से शौहर की इमदाद करे या अपने माल से शौहर को कोई कारोबार वग़ैरह करने की इजाज़त दे।

(2) चूँकि शौहर और बीवी के फ़ायदे आदतन् मुश्तरक और एक दूसरे से जुड़े हैं और वे दोनों एक दूसरे की चीज़ों से उमूमन फ़ायदा उठाते हैं इसलिए शौहर और बीवी का आपस में एक दूसरे को ज़कात देना जायज़ नहीं।

मालदार बीवी के ग़रीब शौहर को ज़कात देना सही है

सवालः एक शख़्स की बीवी के पास चार हज़ार रुपये का सोना और चाँदी है, जबकि मक़रूज़ उससे ज़ायद है (याद रहे सोना चाँदी उसकी बीवी की मिल्कियत हैं) और उसके वालिदैन ने उसे घर से हिस्सा देने से इनकार कर दिया है। तसल्ली-बख़्श जवाब इनायत फ़रमाएँ कि यह शख़्स ज़कात ले सकता है या नहीं? क़र्ज़दार खुद यह शख़्स है, माल इसकी बीवी के पास है।

जवाबः यह शख़्स दूसरों से ज़कात ले सकता है, मगर उसकी बीवी उसको ज़कात नहीं दे सकती। बहरहाल शौहर अगर ग़रीब है तो वह ज़कात का मुस्तहिक़ है, बीवी के मालदार होने की वजह से वह मालदार नहीं कहलायेगा।

शादीशुदा औरत को ज़कात देना

सवालः एक औरत जिसका शौहर ज़िन्दा है, लेकिन वे

लोग मेहनत-मज़दूरी करते हैं, क्या उनको ख़ैरात सदक़ा या ज़कात देना जायज़ है?

जवाबः अगर वे ग़रीब और मुस्तहिक़ हैं तो जायज़ है।

मालदार औलाद वाली बेवा को ज़कात

सवालः एक औरत जो कि बेवा है, लेकिन उसके चार पाँच लड़के रोज़गार पर हैं, अच्छी ख़ासी आमदनी होती है, अगर वे लड़के माँ की बिल्कुल माली मदद नहीं करते तो क्या उस औरत को ज़कात देना जायज़ है? अगर मान लीजिये औलाद थोड़ी बहुत इमदाद देती है जो उसके लिए नाकाफ़ी है तब उसे ज़कात देना जायज़ है या नहीं?

जवाबः उस औरत के ख़र्चे उसके बेटों के ज़िम्मे हैं, लेकिन अगर वह नादार है और लड़के उसकी माली मदद इतनी नहीं करते जो उसकी रोज़मर्रा की ज़रूरतों के लिए काफ़ी हो तो उसको ज़कात देना जायज़ है।

ज़कात की मुस्तहिक़

सवालः मेरी बेवा भावज हैं, उनके पास तक़रीबन 15 तोले सोने का ज़ेवर है, जबकि उनकी कोई आमदनी नहीं है, न कोई मकान है न कोई आमदनी का ज़रिया है, उनको क्या ज़कात दी जा सकती है? यह वाज़ेह रहे कि यह ज़ेवर उनके पास है, वह उनके शौहर और उनके वालिदैन (माँ-बाप) ने दिया था, हमारे साथ ही रहती हैं। उनका एक बेटा है जो अभी पढ़ रहा है और कमाने के क़ाबिल नहीं है।

जवाबः आपकी भावज के पास अगर 15 तोले सोना

उनकी मिल्कियत में है तो उनको ज़कात देना जायज़ नहीं, बल्कि खुद उन पर ज़कात फ़र्ज़ है। हाँ उनके बेटे के पास अगर कुछ नहीं तो उसको ज़कात दे सकते हैं।

बेवा और बच्चों को तर्का मिलने पर ज़कात

सवालः एक बेवा औरत है जिसकी औलाद में तीन बेटे हैं, उसे अपने शौहर के तर्के (छोड़े हुए माल) में तक़रीबन चालीस हज़ार रुपये मिले। उसने वह रक़म बैंक में फ़िक्सड डिपाज़िट रखवा दी और उस पर जो सूद या मुनाफ़ा जो भी मिलता है उससे उसका गुज़ारा होता है, क्या उसके ऊपर ज़कात वाजिब है? (याद रहे कि इसके अ़लावा उनका कोई आमदनी का ज़रिया नहीं)

जवाबः उस रक़म को शरई हिस्सों पर तक़सीम किया जाए। हर एक के हिस्से में जो रक़म आए अगर वह निसाब (साढ़े बावन तोले चाँदी की मालियत) को पहुँचती हो तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ है, नाबालिग़ बच्चों के हिस्से पर नहीं।

सवालः जब हुकूमते पाकिस्तान ने ज़कात के बारे में हुक्म-नामा लागू किया और ज़कात काट ली, उसके बाद आला अफ़सरान से रूजू किया गया तो जवाब में उन्होंने मौहल्ला-कमेटी को ज़कात फ़न्ड से ज़कात वज़ीफ़ा देने के लिए कहा। क्या वह ज़कात लेने की हक़दार है? जबकि वह अपनी आमदनी से गुज़ारा कर रही है, और ज़कात लेना नहीं चाहती।

जवाबः साहिबे निसाब (यानी शरीअ़त के हिसाब से मालदार आदमी) ज़कात नहीं ले सकता।

ज़रूरत-मन्द लेकिन साहिबे निसाब बेवा की ज़कात से इमदाद कैसे?

सवालः एक ज़रूरत मन्द औ़रत जो अब बेवा हैं, उनके शौहर का एक हफ़्ता पहले इन्तिक़ाल हो गया, उन ख़ातून का कोई गुज़ारे का ज़रिया नहीं, मरहूम की एक बच्ची की उम्र 9 साल है, किराये के मकान में रहती हैं, मासिक किराया 500 रुपये है, उन बेवा ख़ातून के पास एक सेट सोने का शादी के वक़्त का है, वज़न तक़रीबन दस तोले है, बेवा उसको बेटी के लिए मख़्सूस करना चाहती हैं, यानी उस ज़ेवर की मिल्कियत 9 साल की बच्ची के नाम करना चाहती हैं, इन हालात में क्या उक्त बेवा को शरई तौर पर ज़कात की मुस्तहिक़ क़रार दे सकते हैं? यानी उनकी ज़रूरत ज़कात के मासिक वज़ीफ़े की शक्ल में पूरी की जा सकती है या नहीं?

जवाबः अगर सोने का सेट अपनी लड़की के नाम हिबा कर दिया तो उक्त बेवा ज़कात की मुस्तहिक़ है और उसकी इमदाद ज़कात से की जा सकती है।

परेशान-हाल बेवा को ज़कात देना

सवालः हमारे मौहल्ले में एक बेवा औ़रत रहती है, उसकी एक नौजवान बेटी है जो कि स्थानीय कालिज में पढ़ती है, उस बेवा औ़रत का एक भाई है जो अनाज की दलाली करता है और महीने के दो हज़ार रुपये कमाता है, लेकिन अपनी बेवा बहन और माँ को कुछ भी नहीं देता। उस बेवा औ़रत की माँ बिल्कुल ज़ईफ़ और बीमार है, उन सब का ख़र्च

भतीजा उठाता है। उस भतीजे की भी शादी हो गई है, और उसकी एक बच्ची भी है, अब वह भातीजा यह कहता है कि मैं सब का ख़र्च नहीं उठा सकता, अब वह बेवा औ़रत बिल्कुल अकेली हो गई है, और उसकी मदद करने वाला कोई नहीं। तो क्या इस सूरतेहाल में उसका ज़कात लेना जायज़ है? और क्या हम सब बिरादरी वाले मिलकर बेवा औ़रत के भाई को रुपये न देने पर उससे ज़बरदस्ती कर सकते हैं?

जवाबः भाई की अगर गुंजाईश है तो उसे चाहिए कि अपनी बहन के ख़र्चे बरदाश्त करे, अगर वह नहीं करता या गुंजाईश नहीं रखता और उस बेवा के पास भी निसाब की मिक़दार में सोना चाँदी या रुपया पैसा नहीं है, तो ज़ाहिर है कि वह नादार भी है और बेसहारा भी, इस सूरत में उसको ज़कात व सदक़े देना ज़रूरी है।

रोज़गार पर लगी बेवा को ज़कात देना

सवालः हमारे इलाक़े में एक बेवा औ़रत है जो हुकूमते पाकिस्तान के शिक्षा विभाग में मुलाज़िम है। तन्ख़्वाह माहाना पाँच सौ रुपये है, उनका एक जवान लड़का भी सरकारी मुलाज़िम है, दोनों एक साथ हुकूमत के दिये हुए सरकारी कुवार्टर में रहते हैं। हमारे इलाक़े की ज़कात कमेटी ने उस बेवा औ़रत के लिए ज़कात फ़न्ड से पचास रुपये माहाना वज़ीफ़ा मुक़र्रर किया है, और हर महीने अदा किया जाता है। क्या बेवा होने की वजह से जबकि सरकारी मुलाज़िमा हो, वह ज़कात की मुस्तहिक़ है?

जवाबः अगर वह मक़रूज़ (क़र्ज़दार) नहीं, रोज़गार पर है

तो उसको ज़कात नहीं लेनी चाहिए, लेकिन अगर वह साहिबे निसाब नहीं तो उसको देने से ज़कात अदा हो जाएगी।

शौहर के भाईयों और भतीजों को ज़कात देना

सवालः मेरे शौहर के चार भाई और एक बहन है, जो पहले शौहर से तलाक़ लेने के बाद दूसरी जगह शादी कर चुकी है, मगर पहले शौहर से तीन बच्चे हैं जो मेरे दूसरे देवर के यहाँ रहते हैं, और तालीम हासिल कर रहे हैं। इतनी महंगाई में जहाँ घर का ख़र्चा पूरा नहीं होता वहाँ उनको ख़र्चा देना भी एक मसला है, इसके अलावा मेरे बड़े देवर का इन्तिक़ाल हो चुका है और उनके बच्चे भी पढ़ रहे हैं। मालूम यह करना है कि क्या हम उन बच्चों की तालीम या शादी-ब्याह पर ज़कात की मद में ख़र्च कर सकते हैं? और हमारी ज़कात अदा हो जाएगी? लेकिन उन बच्चों को इल्म न हो कि यह ज़कात है।

जवाबः आप अपने शौहर के भांजों और भतीजों को ज़कात दे सकती हैं। आपके शौहर भी दे सकते हैं। ज़कात की अदायेगी के लिए उनको बताना ज़रूरी नहीं कि यह ज़कात की रक़म है, खुद नीयत कर लेना काफ़ी है। उनको चाहे हदिये-तोहफ़े के नाम से दी जाए तब भी ज़कात अदा हो जाएगी।

ग़ैर-मुस्तहिक़ को ज़कात की अदायेगी

सवालः सदक़ा ख़ैरात या ज़कात किसी शख़्स को मुस्तहिक़ समझ कर दी जाए और हक़ीक़त में वह मुस्तहिक़ न

हो बल्कि अपने आपको मिस्कीन ज़ाहिर करता हो, जैसे आजकल के अक्सर भिखारी, तो सदक़ा ख़ैरात या ज़कात देने वाला सवाब पायेगा या नहीं?

जवाबः ज़कात अदा करते वक़्त अगर गुमाने ग़ालिब था कि यह शख़्स ज़कात का मुस्तहिक़ है तो ज़कात अदा हो गई, मगर भीख माँगने वालों को नहीं देना चाहिए।

काम-काज न करने वाले आदमी की कफ़ालत ज़कात से करना जायज़ है

सवालः एक शख़्स जान-बूझकर काम नहीं करता, बड़ा हराम है, रिश्तेदारों से धाखेबाज़ी करता है, वे मजबूरन उसकी कफ़ालत (ज़रूरत पूरी और देखभाल) करते हैं। क्या ज़कात से उसकी कफ़ालत जायज़ है और ज़कात अदा हो जाएगी?

जवाबः ज़कात तो अदा हो जाएगी।

साहिबे निसाब मक़रूज़ पर ज़कात फ़र्ज़ है या नहीं

सवालः अगर साहिबे निसाब मक़रूज़ हो तो उसके लिए क्या हुक्म है? हमने सुना है कि क़र्ज़दार पर किसी सूरत में भी ज़कात वाजिब नहीं होती, जब तक कि वह क़र्ज़ अदा न कर दे, चाहे उसके पास इतना रुपया हो कि वह क़र्ज़ अदा कर सकता हो।

जवाबः उसूल यह है कि अगर किसी के पास माल भी हो और वह मक़रूज़ भी हो तो यह देखा जाएगा कि क़र्ज़ निकालने के बाद उसके पास निसाब के बराबर मालियत बचती है या नहीं? अगर क़र्ज़ निकालने के बाद निसाब के

बराबर मालियत बच रहती है तो उस पर उस बचत की ज़कात वाजिब है, चाहे वह क़र्ज़ अदा करे या न करे, और क़र्ज़ निकालने के बाद निसाब के बराबर मालियत नहीं बचती तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं। इस उसूल को अच्छी तरह समझ लिया जाए।

क़र्ज़दार की ज़कात का हुक्म

सवालः ज़ैद व उमर दो भाई हैं, ज़ैद ने उमर को कारोबार के लिये विभिन्न वक़्तों में अच्छी ख़ासी रक़म बतौर क़र्ज़ दी, कुछ कारणों की बिना पर कारोबार में घाटा होता चला गया, ज़ैद काफ़ी अ़र्से से अपनी रक़म का तलबगार है, लेकिन उमर के लिए रक़म की अदायेगी मुम्किन नज़र नहीं आती और कारोबार भी सिर्फ़ नाम का है, तो क्या अब उसके लिए ज़कात लेकर क़र्ज़ की मद में अदा करना शरअ़न मुनासिब है? तथा अपने में से किसी को इतनी या थोड़ी सी रक़म ज़कात की निकाल कर उमर को देनी चाहिए ताकि वह क़र्ज़ चुका सेके, तो आया उनके लिए भी शरअ़न जायज़ है या नहीं?

जवाबः अगर उमर का असासा इतना नहीं कि वह क़र्ज़ा अदा कर सके तो उसको ज़कात की रक़म दी जा कसती है।

मक़रूज़ को ज़कात देकर क़र्ज़ वुसूल करना

सवालः एक शख़्स पर हमारे 3300 रुपये क़र्ज़ थे, वह शख़्स बहुत ग़रीब है, हमने उस शख़्स को इतनी रक़म बतौर ज़कात अदा कर दी और उसने वह रक़म हमें क़र्ज़े में वापस कर दी, क्या इस तरह हमारी ज़कात अदा हो गई?

जवाबः आपकी ज़कात अदा हो गई और उसका क़र्ज़ अदा हो गया।

मुस्तहिक़ को ज़कात में मकान बनाकर देना और वापसी की उम्मीद करना

सवालः अल्लाह का शुक्र है, आजकल ज़कात व उश्र के निफ़ाज़ (लागू होने) और सूद के ख़ात्मे पर अ़मल दरामद किया जा रहा है, और इस सिलसिले में शरई क़वानीन का निफ़ाज़ अ़मल में लाया जा रहा है। ज़कात व उश्र की मुस्तहिक़ लोगों को तक़सीम के सिलसिले में मोहतरम जनाब वज़ीरे ख़ज़ाना ने गुज़िश्ता दिनों मुख़्तलिफ़ मौक़ों पर फ़रमाया था कि ज़कात की तक़सीम का बेहतरीन तरीक़ा यह है कि मुस्तहिक़ की इज़्ज़ते नफ़्स मजरूह न हो, और उसको इस तरह तक़सीम किया जाए कि मुस्तक़बिल में वह ज़कात लेने का मुस्तहिक़ न रहे। यानी थोड़ी मात्रा में नहीं बल्कि ऐसी मदद हो कि मुस्तहिक़ का मुस्तक़बिल (भविष्य) संवर जाए।

लिहाज़ा क्या ऐसे अफ़राद में भी ज़कात तक़सीम की जा सकती है जो "ग़रीबुल-वतनी" की ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं, यानी जिनके पास अभी तक मुस्तक़िल रहने का कोई मकान ज़ाती नहीं, प्लाट है लेकिन नौकरी पेशा होने की बिना पर आमदनी में सिर्फ़ खाने पहनने के लिए ही मुश्किल से होता है, या और किसी वजह से बहुत ही बदहाली के सबब ज़ाती रहने का मकान अपने हासिल किये हुए प्लाट में मौजूदा दौर की सख़्त महंगाई में तामीर कराने के बारे में सोच भी नहीं सकते

हैं। क्या ऐसी सूरत में मकान की तामीर के लिए, तामीराती अन्दाज़े के मुताबिक़ एकमुश्त रक़म ज़कात से दी जा सकती है, ताकि एक कुंबा और एक ख़ानदान का सर छुप जाए। इसके अ़लावा क्या ज़कात लेने वाला ऐसा मुस्तहिक़ मकान का तामीरी काम मुकम्मल होने के बाद ज़कात की रक़म वापस क़िस्तों में अपनी ख़ुशी से अदा कर सकता है?

जवाबः ऐसे ग़रीब और नादार लोग जो निसाब के बक़द्र असासा (माल और सरमाया) न रखते हों उनको ज़कात देना जायज़ है और उसकी सूरत यह हो सकती है कि ज़कात की रक़म से मकान बनवाकर उनको मकान का मालिक बना दिया जाए। ऐसे ग़रीब व नादारों से रक़म की वापसी की उम्मीद रखना बेकार है, इसलिए रज़ाकाराना (अपनी ख़ुशी से) वापसी का सवाल बहस से ख़ारिज है।

साहिबे निसाब के लिए ज़कात की मद से खाना

सवालः मैं मदरसे में क़ुरआन मजीद हिफ़्ज़ कर रहा हूँ और मेरी उम्र तक़रीबन बीस साल हो चुकी है। हमारे घरेलू हालात भी बहुत अच्छे हैं और घर की सारी आमदनी और ख़र्चे मुझसे तीन बड़े भाईयों के हाथों में हैं, जबकि मेरा मदरसे में खाना पीना और रहना सहना होता है, और आपको मालूम होगा कि दीनी मदरसों का गुज़ारा अक्सर ज़कात, ख़ैरात और क़ुरबानी की खालों से होता है। मेहरबानी फ़रमाकर यह बताएँ कि मदरसे का यह खाना मुझ पर जायज़ है या नाजायज़?

जवाबः अगर वालिदैन (माँ-बाप) की जायदाद से आपको इतना मिला है कि आप साहिबे निसाब हैं (यानी साढ़े बावन

तोले चाँदी के बराबर मालियत आपके हिस्से में आती है) तो ज़कात की मद से खाना आपके लिए जायज़ ही नहीं।

माज़ूर लड़के के बाप को ज़कात देना

सवालः एक सरकारी मुलाज़िम ग्रेड नम्बर 1 का एक लड़का जिसकी उम्र तक़रीबन दस साल है, दिमाग़ी बीमारी में मुब्तला है और उसका बाप उसकी कफ़ालत (ख़र्च और ज़रूरतें पूरी करना) करता है, और जहाँ तक मुम्किन होता हैं वह दवा इलाज भी करता है। उस लड़के की दिमाग़ी परेशानी की बिना पर हमारी ज़कात कमेटी ने ज़कात फ़न्ड से माहाना वज़ीफ़ा मुक़र्रर कर रखा है, और हर महीने दिया जा रहा है। मरीज़ लड़के का बाप सरकारी मुलाज़मत के साथ-साथ हुकूमत की तरफ़ से दिये गये कुवार्टर में रहता है। क्या ऐसी हालत में लड़के का बाप ज़कात का मुस्तहिक़ है?

जवाबः अगर उस लड़के का बाप नादार (ग़रीब और तंगदस्त) है तो ज़कात का मुस्तहिक़ है। बाज़ बाल-बच्चोंदार लोग ऐसे होते हैं कि वे साहिबे निसाब नहीं होते, उनका रोज़गार भी उनके ख़र्चों के लिए काफ़ी नहीं होता, ऐसे लोगों को ज़कात देना जायज़ है।

ग़रीब को ज़कात देना और नीयत

सवालः हमारे जानने वालों में एक सफ़ेद-पोश से (यानी ज़ाहिरी हालत से ठीक-ठाक दिखाई देने वाले) आदमी हैं, मगर माली एतिबार से बहुत कमज़ोर हैं। रेढ़ी लगाते हैं, बीवी टी. बी. की मरीज़ है। वह घर से कुछ चने कबाब वग़ैरह बना

देती है और वह जाकर फ़रोख़्त कर आते हैं। दो-तीन छोटे-छोटे बच्चे हैं, उनका ज़ाती मकान है, क्या ऐसे शख़्स को ज़कात लग जाती है, और अगर वे ज़कात लेना पसन्द न करे तो उनको बग़ैर बताए ज़कात दे सकते हैं या नहीं?

जवाबः ज़ाती मकान और रेढ़ी लगाने के बावजूद अगर वह नादार और ज़रूरत-मन्द है तो उसको ज़कात देना सही है। ज़कात की अदायेगी के लिए उसको यह बताना शर्त नहीं कि यह ज़कात है, तोहफ़ा और हदिया कहकर दे दिया जाए और नीयत ज़कात की कर ली जाए तब भी ज़कात अदा हो जाएगी।

क्या निसाब की क़ीमत वाली भैंस का मालिक ज़कात ले सकता है

सवालः अगर एक आदमी के पास एक घड़ी है या एक गाय है या भैंस है, जिसकी क़ीमत निसाब के बराबर है, उस आदमी के लिए ज़कात की रक़म, फ़ित्रे की रक़म लेना जायज़ है या नहीं?

जवाबः ये चीज़ें जो सवाल में ज़िक्र की हैं, ज़ाती ज़रूरत की चीज़ों में शामिल हैं, इसलिए यह शख़्स ज़कात ले सकता है।

इमाम को ज़कात देना

सवालः इमाम मस्जिद के लिए ज़कात जायज़ है या नहीं?

जवाबः अगर वह मोहताज और फ़क़ीर है तो जायज़ है, वरना नहीं। महज़ इमाम मस्जिद होने की वजह से तो कोई

ज़कात का मुस्तहिक़ नहीं हो जाता, इमामत की उजरत के तौर पर ज़कात देना भी सही नहीं।

इमाम मस्जिद को तन्ख़्वाह ज़कात की रक़म से देना जायज़ नहीं

सवालः हमारे इलाक़े में यह दस्तूर है कि जब एक आ़लिम को अपना पेश इमाम बनाते हैं तो उसके लिए किसी क़िस्म की तन्ख़्वाह या ख़र्च मुक़र्रर नहीं करते, बल्कि इलाक़े की रस्म यह है कि लोग यानी मौहल्ले वाले उस इमाम को ज़कात देते हैं। पहले से यह तय नहीं होता कि इमामत करूँगा तो तुम मुझको ज़कात देना, इसलिए पेश इमाम को ज़कात देना इमाम को भी मालूम है कि रस्म की वजह से है और क़ौम को भी, क्या इस तरह इमामत करने से क़ौम की ज़कात निकलती है या नहीं? और पेश इमाम के लिए इस तरह इमामत करने में कुछ बुराई है या नहीं?

जवाबः अगरचे इमाम साहिब से यह बात नहीं हुई कि उनको ज़कात की रक़म से तन्ख़्वाह दी जाएगी, लेकिन चूँकि "अल-मारूफ़ कल-मश्रूत" के उसूल के मुताबिक़ कि जो चीज़ पहले से ज़ेहन में तयशुदा है वह ऐसी है जैसे कि उसकी शर्त लगाई जाए। चुनाँचे जब इमाम साहिब और ज़कात देने वालों के ज़ेहनों में यह बात पहले से है कि इस इमाम की कोई तन्ख़्वाह मुक़र्रर नहीं की जाएगी और इसको ज़कात की रक़म दी जाती रहेगी, लिहाज़ा ज़कात की रक़म से इमाम को तन्ख़्वाह या दूसरे अलफ़ाज़ में उसकी इमामत की उजरत देना

जायज़ नहीं है, अलबत्ता अगर उसको इमामत की उजरत अलग दी जाती हो फिर ग़रीब मोहताज होने की वजह से उसको ज़कात दे दी जाए तो सही है।

जेल में ज़कात देना

सवालः जेल के अन्दर नमाज़े जुमा और ज़कात देना जायज़ है या नहीं? अगर है तो क्या जेल के अन्दर मुस्तहिक़ क़ैदी को दे सकते हैं या नहीं?

जवाबः जेल में नमाज़ तो जमाअ़त के साथ पढ़नी चाहिए मगर जुमा के बजाये ज़ोहर की नमाज़ पढ़नी चाहिए। जेल के क़ैदियों में जो लोग ज़कात के मुस्तहिक़ हों उनको ज़कात देना दुरुस्त है।

भीख माँगने वालों को ज़कात देना

सवालः रमज़ान मुबारक में कराची में मुल्क के विभिन्न हिस्सों से बड़े पैमाने पर ख़ाना-बदोश आते हैं। ये लोग कराची के इलाक़ों में ज़कात, ख़ैरात माँगते हैं। शरई एतिबार से बताईये कि उन लोगों को ज़कात फ़ित्रा वग़ैरह देना जायज़ है या नहीं?

जवाबः बहुत से भीख माँगने वाले ख़ुद साहिबे निसाब होते हैं, इसलिए जब तक यह इत्मीनान न हो कि यह वाक़ई मोहताज है उसको ज़कात और सदक़ा-ए-फ़ित्र देना सही नहीं।

ग़ैर-मुस्लिम को ज़कात देना जायज़ नहीं

सवालः क्या ग़ैर-मुस्लिम यानी ईसाई औ़रतें जो घर में काम करती हैं, ज़कात, ख़ैरात या सदक़े की मुस्तहिक़ हो

सकती हैं? क्योंकि ये लोग भी ग़रीब ही होते हैं, मेहनत से अपना गुज़ारा मुश्किल से करती हैं।

जवाबः ग़ैर-मुस्लिम को ज़कात देना दुरुस्त नहीं, नफ़्ली सदक़ा दे सकते हैं, मगर उजरत में न दिया जाए।

ग़ैर-मुस्लिम को ज़कात और सदक़ा देना दुरुस्त नहीं

सवालः लम्बे समय से ईदों के क़रीब दिनों में क़ाफ़िले के क़ाफ़िले ग़ैर-मुस्लिम ख़ाना-बदोशों के कराची व दूसरे शहरों की तरफ़ ज़कात व फ़ित्रा वुसूल करने के लिये पहुँच जाते हैं। उन ख़ाना-बदोशों में अक्सरियत ग़ैर-मुस्लिमों की होती है। क्या ग़ैर-मुस्लिमों को ज़कात व फ़ित्रा दिया जा सकता है? और क्या यह मुसलमान फ़ुक़रा (ग़रीबों और तंगदस्तों) का हक़ नहीं है? और अगर यह मुसलमान मिस्कीन ग़रीबों का हक़ है तो जो लोग उन ग़ैर-मुस्लिमों को ज़कात व फ़ित्रा देते हैं क्या उनकी ज़कात व फ़ित्रा अदा हो जाता है?

जवाबः ज़कात और सदक़ा-ए-फ़ित्र सिर्फ़ मुसलमान ग़रीबों और मिस्कीनों को दिया जा सकता है, जिन लोगों ने ग़ैर-मुस्लिमों को दिया हो वे दोबारा अदा करें।

ग़ैर-मुस्लिमों को ज़कात

सवालः क्या ग़ैर-मुस्लिम (हिन्दू सिख ईसाई क़ादयानी पारसी वग़ैरह) को ज़कात देना जायज़ है? जबकि सैंकड़ों मुस्तहिक़ मुसलमान मौजूद हों?

जवाबः हुकूमत बैंकों में जमा शुदा रक़्मों से सिर्फ़ मुसलमानों के खातों से ज़कात काटती है, जबकि उस ज़कात में से कुछ हिस्सा कालिजों के छात्रों को बतौर इमदाद दिया जाता है, उन छात्रों में मुसलमान छात्रों के अ़लावा क़ादयानी, हिन्दू सभी शामिल होते हैं। आपसे यह मालूम करना है कि आया ज़कात का यह मसूरफ़ (अदा और ख़र्च करने की जगह) इस्लाम के ऐन मुताबिक़ है या इसमें इख़्तिलाफ़ (मतभेद) है?

जवाबः ज़कात का मसूरफ़ (ख़र्च का स्थान) सिर्फ़ मुसलमान हैं, किसी ग़ैर-मुस्लिम को ज़कात देना जायज़ नहीं। अगर हुकूमत ज़कात की रक़्म ग़ैर-मुस्लिमों को देती है और सही मसूरफ़ (जगह) पर ख़र्च नहीं करती तो ज़कात देने वालों की ज़कात अदा नहीं होगी।

ज़कात और खालें उन संगठनों को दें जो उनको सही जगह पर ख़र्च करें

सवालः मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) तन्ज़ीमें ज़कात और क़ुरबानी की खालें जमा करती हैं, जबकि यह उनके ज़रिये जो रक़्में हासिल होती हैं उनका हिसाब भी पेश नहीं करतीं, न ही ख़र्चों का, तो क्या इस सूरत में उनको ज़कात और क़ुरबानी की खालें देने से ज़कात और क़ुरबानी अदा हो जाती है?

जवाबः ज़कात और क़ुरबानी की खालों की रक़्म का किसी मोहताज (ज़रूरत मन्द और ग़रीब) को मालिक बनाना ज़रूरी है, उसके बग़ैर ज़कात अदा नहीं होती और क़ुरबानी का सवाब ज़ाया हो जाता है। पस जिन इदारों और तन्ज़ीमों

(संस्थाओं और संगठनों) के बारे में पूरा इत्मीनान हो कि वे ज़कात की रक़म को ठीक तरीक़े से सही मसरफ़ (जगह) पर ख़र्च करते हैं उनको ज़कात देनी चाहिए। और जिनके बारे में यह इत्मीनान न हो उनको दी गई ज़कात अदा नहीं हुई। उन लोगों को चाहिए कि अपनी ज़कात दोबारा अदा करें।

दीनी मदरसों को ज़कात देना बेहतर है

सवालः दीनी मदरसों में ज़कात देना जायज़ है या नहीं?

जवाबः ज़कात देना जायज़ ही नहीं बल्कि बेहतर है, क्योंकि ग़रीबों व मसाकीन की मदद के साथ ही साथ दीनी उलूम की सरपरस्ती भी होती है।

क्या ज़कात और क़ुरबानी की खाल मदरसे को देना जायज़ है

सवालः माले ज़कात और क़ुरबानी की खाल दीनी मदरसों की तामीर और वहाँ के पढ़ाने वालों की तन्ख़्वाहों वग़ैरह में ख़र्च की जा सकती है या नहीं? चूँकि यहाँ के किसी ख़तीब साहिब ने जुमे के मौक़े पर तक़रीर करते हुए लोगों को कहा कि मदरसे की तामीर और उस्तादों की तन्ख़्वाहों में यह माल ख़र्च करना नाजायज़ है, जिसकी वजह से लोगों को शुब्हा हुआ, क्योंकि लम्बे समय से लोग माले ज़कात और क़ुरबानी की खालों के ज़रिये दीनी मदरसों की इमदाद करते थे कि ये दीन की ख़िदमत कर रहे हैं। और अब उन्होंने दूसरे मसाकीन को देना शुरू किया, जिसकी वजह से मदरसों को ज़ाहिरी तौर पर नुक़सान हुआ। इसलिए बराहे करम वज़ाहत

फ़रमा दें ताकि अ़वामुन्नास के दिलों से शुकूक दूर हो जाएँ और मदरसे के मोहतमिम हज़रात भी सही तरीक़े से यह माल ख़र्च करें।

जवाबः ज़कात, क़ुरबानी की खाल और सदक़ाते वाजिबा से न मदरसे की तामीर हो सकती है और न मदरसे की तन्ख़्वाह में देना दुरुस्त है, मगर चूँकि दीनी मदारिस की ज़्यादा आमदनी इसी मद से होती है इसलिए तमलीक के ज़रिये यह रक़म इस्तेमाल की जाती है, तमलीक की सही सूरत किसी आ़लिम से मालूम कर लें।

ज़कात की रक़म से मदरसा और मतब चलाने की सूरत

सवालः हमारे एक दोस्त औरंगी टाऊन में एक दीनी मदरसा क़ायम करना चाहते हैं, जिसमें मक़ामी बच्चों को हिफ़्ज़ व नाज़िरा क़ुरआन की तालीम दी जाएगी और उसके बाद उसमें रियायती मतब (इलाज के लिये दवाख़ाना) खोलने का इरादा है। मालूम यह करना है कि क्या मदरसे के विस्तार, तामीर और उस्तादों की तन्ख़्वाह ज़कात व सदक़ों से अदा की जा सकती है? क्या मतब की मद में ज़कात, सदक़ात, अ़तीयात की रक़म ली जा सकती है?

जवाबः बग़ैर तमलीक के ज़कात की रक़म मस्जिद, मदरसे और पढ़ाने वालों की तन्ख़्वाह में इस्तेमाल नहीं हो सकती, उसकी तदबीर यह है कि कोई मोहताज (ग़रीब और नादार) आदमी क़र्ज़ लेकर मदरसे में दे दे और ज़कात की रक़म से उसका क़र्ज़ अदा कर दिया जाए। यानी ज़कात की

रक़म उसको दे दी जाए, जिससे वह अपना क़र्ज़ अदा करे। मतब (दवाख़ाने) का भी यही हुक्म है।

ज़कात से अस्पताल क़ायम करना

सवालः एक बिरादरी के लोग ज़कात वुसूल करके उस फ़न्ड से डिस्पेन्सरी क़ायम करना चाहते हैं। दवाईयाँ ज़कात फ़न्ड की रक़म से ख़रीदी जाएँगी, डाक्टरों की फ़ीस, जगह का किराया और दीगर ख़र्चे ज़कात से ख़र्च किए जाएँगे, जबकि डिस्पेन्सरी से हर शख़्स अमीर व ग़रीब दवाई ले सकेगा।

एक मसला यह भी है जैसा कि इदारा ज़कात वुसूल करता है तो वह ज़कात मुस्तहिक़ लोगों में तक़सीम करने के बाद बच जाती है, आया इदारा उस ज़कात को उसी साल ख़त्म कर दे या उसे आईन्दा साल भी तक़सीम कर सकता है? बराहे करम इसका जवाब भी ज़रूर लिखें।

जवाबः ज़कात की रक़म का मालिक किसी मुस्तहिक़ को बनाना ज़रूरी है, इसलिए न तो उससे डिस्पेन्सरी (अस्पताल) की तामीर जायज़ है, न डाक्टरों की फ़ीस, न सामान व औज़ारों की ख़रीद, न साहिबे हैसियत लोगों को उसमें दवाईयाँ देना जायज़ है, अलबत्ता मुस्तहिक़ लोगों को दवाईयाँ दे सकते हैं।

जहाँ तक साल ख़त्म होने से पहले ज़कात की रक़म ख़र्च कर देने का सवाल है तो यह उसूल ज़ेहन में रहना चाहिए कि जब तक आप यह रक़म मुस्तहिक़ लोगों को नहीं दे देंगे तब तक मालिकान की ज़कात अदा नहीं होगी, इसलिए जहाँ तक मुम्किन हो उस रक़म को जल्दी ख़र्च कर देना चाहिए।

मस्जिद में ज़कात का पैसा लगाने से ज़कात अदा नहीं होती

सवालः एक मस्जिद में जो कमेटी के मातहत चल रही है, तो उस कमेटी का ज़कात के माल पर क़ब्ज़ा करके उस ज़कात के माल को मस्जिद में ख़र्च करना कैसा है?

जवाबः ज़कात का रुपया मस्जिद में लगाने से ज़कात अदा नहीं होगी।

तब्लीग़ के लिए भी किसी को मालिक बनाए बग़ैर ज़कात अदा नहीं होगी

सवालः ज़कात की रक़म से तब्लीग़ के कामों में किसी क़िस्म की मदद हो सकती है या नहीं?

जवाबः ज़कात की रक़म में तमलीक (यानी किसी ग़रीब को उसका मालिक बनाना) शर्त है, यानी जो शख़्स ज़कात का मुस्तहिक़ हो उसे इतनी रक़म का मालिक बना दिया जाए। तमलीक के बग़ैर ख़ैर के काम में ख़र्च कर देने से भी ज़कात अदा नहीं होगी।

ज़कात की रक़म से कीड़े-मकोड़ों और परिन्दों को दाना डालने से ज़कात अदा नहीं होगी

सवालः क्या ज़कात की रक़म से परिन्दों चिड़ियों वग़ैरह को दाना डाल सकते हैं? क्या कीड़े-मकोड़ों को खाने की चीज़ें

ज़कात की रक़म से ख़रीदकर डाल सकते हैं? ऐसा करने से क्या ज़कात अदा हो जाएगी?

जवाबः इससे ज़कात अदा नहीं होती, ज़कात अदा होने की शर्त यह है कि ज़कात की रक़म का किसी मोहताज ग़रीब मुसलमान को मालिक बना दिया जाए। अगर ज़कात की रक़म का खाना पकाकर ग़रीबों, मोहताजों की दावत कर दी जाए कि जिसकी जितनी ख़्वाहिश हो खाए मगर साथ ले जाने की इजाज़त नहीं, इससे भी ज़कात अदा नहीं होगी।

हुकूमत के ज़रिये ज़कात की तक़सीम

सवालः मौजूदा हुकूमत ज़कात के नाम से जो रक़म तक़सीम कर रही है, शरई तौर पर उस रक़म की क्या हैसियत है? बहुत सी बार साहिबे निसाब लोग भी खुद को मिस्कीन ज़ाहिर करके यह रक़म हासिल कर लेते हैं, उनके लिए क्या हुक्म है? जनाबे आ़ली! मेहरबानी फ़रमाकर यह बताएँ कि यह रक़म किसके लिए जायज़ है और किसके लिए नहीं?

जवाबः साहिबे निसाब लोग ज़कात का मस्रफ़ (ख़र्च होने की जगह) नहीं, उनको ज़कात लेना हराम है। अगर किसी को फ़क़ीर समझ कर ज़कात दे दी गई, बाद में मालूम हुआ कि वह ग़नी (मालदार) था तो ज़कात अदा हो गई।

फ़लाही इदारे ज़कात के वकील हैं जब तक मुस्तहिक़ को अद न कर दें

सवालः किसी "ख़िदमती इदारे" या किसी "वक़्फ़ ट्रस्ट" और फ़ाउन्डेशन को ज़कात देने से क्या ज़कात अदा हो जाती

है?

जवाबः जो फ़लाही इदारे (अ़वामी फ़ायदे और कल्याण की संस्थायें) ज़कात जमा करते हैं वे ज़कात की रक़म के मालिक नहीं होते बल्कि ज़कात देने वालों के वकील और नुमाईन्दे होते हैं। जब तक उनके पास ज़कात का पैसा जमा रहेगा वह बदस्तूर ज़कात देने वालों की मिल्क होगा, अगर वे सही मस्रफ़ (जगह और मौक़े) पर ख़र्च करेंगे तो ज़कात देने वालों की ज़कात अदा होगी वरना नहीं। इसलिए जब तक किसी फ़लाही इदारे (अ़वामी फ़ायदे और कल्याण की संस्था) के बारे में यह इत्मीनान न हो कि वह ज़कात की रक़म शरीअ़त के उसूलों के मुताबिक़ ठीक मस्रफ़ (जगह) में ख़र्च करता है उस वक़्त तक उसको ज़कात न दी जाए।

सवालः इस तरह ज़कात जमा करने वाले इदारे (संस्थायें) जमा की हुई ज़कात की रक़म के खुद मालिक बन जाते हैं या नहीं? और जमा की हुई ज़कात की रक़म को वे जिस तरह चाहें उस तरह लोगों की भलाई के कामों में ख़र्च कर सकते हैं या नहीं? जैसे उस रक़म में से साहिबे ज़कात शख़्स को और बीच के तबक़े के साहिबे माल शख़्स को मकान ख़रीदने के लिए या कारोबार के लिए बिना मुनाफ़े के आसान क़िस्तों में वापस होने वाले क़र्ज़ के तौर पर दे सकते हैं? क्योंकि दरमियानी तबक़े के साहिबे माल ज़कात के मुस्तहिक़ नहीं होते, और ज़कात लेना भी नहीं चाहते, इसके मुताबिक़ उसको ज़कात की रक़म क़र्ज़ के तौर पर देना मुनासिब है या नहीं?

जवाबः ये इदारे इस रक़म में मालिकाना तसर्रुफ़ (अ़मल-दख़ल) करने के मुख़्तार नहीं, बल्कि सिर्फ़ फ़ुक़रा और

मोहताजों को बाँटने के मुजाज़ (अधिकृत और मुख़्तार) हैं। इसलिए उस रक़म को क़र्ज़ पर उठाने का इख़्तियार नहीं रखते। अलबत्ता अगर मालिकान की तरफ़ से इजाज़त हो तो दुरुस्त है। किसी साहिबे निसाब को मकान ख़रीदने के लिए रक़म देने से ज़कात अदा नहीं होगी, अलबत्ता यह सूरत हो सकती है कि वह शख़्स किसी से क़र्ज़ लेकर मकान ख़रीद ले, अब उसको क़र्ज़ा अदा करने के लिए ज़कात देना सही होगा।

ज़कात से चन्दा वुसूल करने वाले को मुक़र्ररा हिस्सा देना जायज़ नहीं

सवालः दीनी मदरसों के चन्दे के लिए बाज़ बच्चे छोटे-छोटे सन्दूक़चे लेकर दूसरे शहरों में जाकर चन्दा माँगते हैं। उनमें अक्सर अफ़राद चन्दे की रक़म से तयशुदा हिस्से पर चन्दा माँगते हैं। बाज़ की तन्ख़्वाहें होती हैं। अगर कोई ज़कात की रक़म उनको दे तो क्या ज़कात का फ़र्ज़ अदा हो जाएगा या नहीं? क्योंकि चन्दा माँगने वालों में बाज़ का हिस्सा (आधा, तिहाई, चौथाई) होता है, तो पूरी रक़म मदरसे में नहीं पहुँचती। इसलिए बराहे करम तफ़सील से इस मसले पर रोशनी डालें।

जवाबः चन्दे के हिस्से पर सफ़ीर मुक़र्रर करना जायज़ नहीं। मदरसों को जो ज़कात दी जाती है अगर वह सही मस्रफ़ (जगह और मौक़े) पर ख़र्च करेंगे तो ज़कात अदा होगी वरना नहीं। इसलिए ज़कात सिर्फ़ उन्हीं मदरसों को दी जाए जिनके बारे में इत्मीनान हो कि वे ठीक मस्रफ़ (जगह)

पर ख़र्च करते हैं। जिन मदरसों के नाम पर बच्चे चन्दा माँगते हैं वे ज़कात को सही मस्‌रफ़ (जगह और मौक़े) में ख़र्च नहीं करते हैं, इसलिए ऐसे मदरसों को चन्दे में ज़कात न दी जाए।

पैदावार का उश्र

उश्र का मतलब और मायने

सवालः (1) उश्र की तारीफ़ (परिभाषा) क्या है? (2) क्या ज़कात की तरह उसका भी निसाब होता है? (3) क्या उश्र सब ज़मीनदारों पर बराबर होता है? (4) यह किन लोगों को अदा किया जाता है? (5) एक आदमी अगर अपने माल की ज़कात अदा करे तो क्या उश्र भी देना होगा? (6) क्या यह साल में एक बार दिया जाता है या हर नई फ़सल पर? (7) क्या मवेशियों के चारे के लिए बोई गई फ़सल पर भी उश्र होगा?

जवाबः उश्र, ज़मीन की पैदावार की ज़कात है। अगर ज़मीन बारानी हो (यानी ऐसी हो कि बारिश की वजह से फ़सल पैदा होती हो) कि बारिश के पानी से सैराब होती है, तो पैदावार उठने के वक़्त उस पर दसवाँ हिस्सा अल्लाह तआ़ला के रास्ते में देना वाजिब है। और अगर ज़मीन को ख़ुद सैराब किया (यानी पानी दिया) जाता है तो उसकी पैदावार का बीसवाँ हिस्सा सदक़ा करना वाजिब है।

2. हमारे इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि के नज़दीक इसका कोई निसाब नहीं बल्कि पैदावार कम हो या

ज़्यादा उस पर उश्र (दसवाँ हिस्सा) वाजिब है।

3. जी हाँ! जो शख़्स भी ज़मीन की फ़सल उठाए उसके ज़िम्मे उश्र वाजिब है।

4. उश्र के मुस्तहिक़ वही लोग हैं जो ज़कात के मुस्तहिक़ हैं।

5. उश्र पैदावार की ज़कात है, इसलिए दूसरे मालों की ज़कात अदा करने के बावजूद पैदावार पर उश्र वाजिब होगा।

6. साल में जितनी फ़सलें आएँ हर नई फ़सल पर उश्र वाजिब है।

7. जी हाँ! मवेशियों (पशुओं) के चारे के लिए बोई गई फ़सल पर भी हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा के नज़दीक उश्र वाजिब है।

ज़मीन की हर पैदावार पर उश्र है, ज़कात नहीं

सवालः उश्र का निसाब क्या है और किन-किन चीज़ों का उश्र दिया जाता है? खेती की पैदावार में 5 फ़ीसद ज़कात दी जाती है तो क्या खेती की पैदावार में उश्र और ज़कात दोनों अदा करने होंगे?

जवाबः हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रह0 के नज़दीक उश्री ज़मीन की हर पैदावार पर उश्र वाजिब है, चाहे कम हो या ज़्यादा। अगर ज़मीन बारानी (बारिश वाली) हो तो उसकी पैदावार में दसवाँ हिस्सा वाजिब है और अगर कुएँ के पानी से सींची जाती है या नहरी पानी ख़रीद कर लगाया जाता हो तो उसमें बीसवाँ हिस्सा वाजिब है। हज़रत इमाम साहिब के नज़दीक फलों, सब्ज़ियों, तरकारियों और मवेशियों के चारे में

भी जिसको काश्त किया जाता है, उश्र वाजिब है। खेती की पैदावार में ज़कात वाजिब नहीं होती, सिर्फ़ उश्र वाजिब है, जिसकी तसफ़ील ऊपर ज़िक्र कर दी गई।

उश्र कितनी आमदनी पर है?

सवालः गुज़ारिश यह है कि आपने एक सवाल के जवाब में फ़रमाया है कि "जो शख़्स भी ज़मीन की फ़सल उठाए चाहे कम हो या ज़्यादा, उसके ज़िम्मे उश्र वाजिब है" इस सिलसिले में यह भी वज़ाहत फ़रमा दें कि अगर किसी शख़्स के पास थोड़ी सी ज़मीन है और वह उस पर काश्त करता है, फ़सल अच्छी नहीं होती, खाद पानी और कीड़ेमार दवाईयों के ख़र्चे भी मुश्किल से पूरे होते हैं, जो फ़सल आती है वह उसकी ज़रूरतों से बहुत कम है, इस तरह वह साहिबे निसाब नहीं है और मुस्तहिक़्के ज़कात है, तो क्या ऐसी सूरत में अपनी फ़सल का उश्र ख़ुद इस्तेमाल कर सकता है?

जवाबः उसकी ज़ाती पैदावार का उश्र उसके ज़िम्मे वाजिब है, उसको ख़ुद इस्तेमाल नहीं कर सकता।

पैदावार के उश्र के बाद उसकी रक़म पर ज़कात का मसला

सवालः बाग़ बेचने के एक महीने बाद किसी ने अपनी सालाना ज़कात निकालनी है, आया उस बाग़ की रक़म पर जिसका उसने उश्र दे दिया है, ज़कात आएगी या नहीं?

जवाबः उस रक़म पर भी ज़कात आएगी। जब दूसरी रक़म की ज़कात दे तो उसके साथ उसकी भी दे।

ग़ल्ले और फल की पैदावार पर उश्र की अदायेगी

सवालः क्या ग़ल्ले या फल के बदले उसकी क़ीमत ज़कात की शक्ल में वुसूल की जा सकती है या जिन्स ही वुसूल करना ज़रूरी है? एक साहिब फ़रमा रहे थे कि अगर जिन्स की क़ीमत दे दी गई तो ज़कात अदा न हुई। हालाँकि उश्र के हुक्म नामे में क़ीमत ही वुसूल की जाती है। दूसरी बात यह है कि खेती की पैदावार में भी कुछ निसाब है, कुछ लोग कहते हैं कि इस निसाब की क़ैद नहीं, कुछ लोग कहते हैं कि कम से कम एक "वसक़" होना ज़रूरी है। एक "वसक़" का क्या वज़न होता है? हम लोगों को मालूम नहीं, बराहे करम हनफ़ी फ़िक़्हा की रू से जवाब इनायत फ़रमाएँ ताकि शुकूक दूर हों।

जवाबः उश्री पैदावार अगर बारानी (बारिश के सबब) हो तो उस पर उश्र (यानी दसवाँ हिस्सा वाजिब है) अगर उस पैदावार पर पानी वग़ैरह के मसारिफ़ (ख़र्चे) आते हों तो बीसवाँ हिस्सा वाजिब है। असल वाजिब तो पैदावार ही का हिस्सा है, लेकिन यह भी इख़्तियार है कि उतने ग़ल्ले की क़ीमत दे दी जाए। हुकूमत जो प्रति ऐकड़ के हिसाब से उश्र वुसूल करती है यह सही नहीं, होना यह चाहिए कि जितनी पैदावार हो उसका दसवाँ या बीसवाँ हिस्सा लिया जाए। पूरे इलाक़े के लिए उश्र का प्रति एकड़ मुक़र्रर कर देना ग़लत है।

उश्र अदा कर देने के बाद फ़रोख़्त करने तक ग़ल्ले पर न उश्र है न ज़कात

सवालः धान से वक़्त पर उश्र निकाला है, ग़ल्ला साल भर रखा रहा, यानी न अपनी किसी ज़रूरत में इस्तेमाल होता है और न मार्केट में उसकी खपत है। क्या साल गुज़रने पर उसमें से उश्र दिया जाएगा या चालीसवाँ हिस्सा ज़कात का?

जवाबः एक बार उश्र अदा कर देने के बाद जब तक उसको फ़रोख़्त नहीं किया जाता उस पर न दोबारा उश्र है न ज़कात। और जब उश्र अदा करने के बाद ग़ल्ला फ़रोख़्त कर दिया तो उससे हासिल शुदा रक़म पर ज़कात उस वक़्त वाजिब होगी जब उस पर साल गुज़र जाएगा, या अगर यह शख़्स पहले से साहिबे निसाब है तो जब उसके निसाब पर साल पूरा होगा उस वक़्त उस रक़म की भी ज़कात अदा करेगा।

मुज़ारअ़त की ज़मीन में उश्र

सवालः मैं एक ज़मीनदार की ज़मीन काश्त करता हूँ। इस साल कुल ज़मीन में दस हज़ार की कपास हुई है, और मेरे हिस्से में पाँच हज़ार आया है, अब क्या मैं पूरे दस हज़ार का उश्र या ज़कात निकालूँ या अपने हिस्से पाँच हज़ार का उश्र या ज़कात निकालूँ।

जवाबः आप अपने हिस्से की पैदावार का उश्र निकालिये, क्योंकि उसूल यह है कि ज़मीन की पैदावार जिसके घर आएगी ज़मीन का उश्र भी उसी के ज़िम्मे होगा। पस मुज़ारे

(हिस्सेदारी पर दूसरे की ज़मीन बोने वाले) के हिस्से में जितनी पैदावार आए उसका उश्र उसके ज़िम्मे है और मालिक के हिस्से में जितनी जाए उसका उश्र उस पर लाज़िम है।

ट्रैक्टर वग़ैरह चलाने से खेती का उश्र बीसवाँ हिस्सा है

सवालः पहले ज़माने में लोग काश्तकारी करते थे हल चलाकर और पानी लगाकर पैदावार हासिल करते थे, लेकिन मौजूदा दौर में ट्रैक्टरों के ज़रिये से हल चलाए जाते हैं और फिर ज़मीन में खाद डालनी पड़ती है, और दूसरी गोडी वग़ैरह कराई जाती है। ऐसी ज़मीन का उश्र अदा करना हो तो ज़मीन पर जो ख़र्चा होता है उसको निकाल कर उश्र अदा किया जाए या कुल पैदावार का बग़ैर ख़र्चा निकाले उश्र अदा करना होगा? और उश्र अदा करते वक़्त बीज निकाल कर उश्र अदा करें या बीज निकाले बग़ैर अदा करें?

जवाबः ऐसी ज़मीन की पैदावार में आधा उश्र यानी पैदावार का बीसवाँ हिस्सा वाजिब है, ख़र्चों को निकाला नहीं जाएगा बल्कि पूरी पैदावार का बीसवाँ हिस्सा अदा करना होगा, बीज को भी ख़र्चों में शुमार किया जाएगा।

क़ाबिले नफ़ा फल होने पर बाग़ बेचना जायज़ है, उसका उश्र मालिक के ज़िम्मे होगा

सवालः एक शख़्स ने अपना फलों का बाग़ क़ाबिले नफ़ा होने के बाद बेच दिया, आया वह उश्र दे या ख़रीदने वाले पर

उश्र आएगा?

जवाबः इस सूरत में ख़रीदने वाले पर उश्र नहीं बल्कि बाग़ के फ़रोख़्त करने वाले पर उश्र है।

उश्र की रक़म आ़म फ़ायदे के कामों के लिए नहीं बल्कि ग़रीबों के लिए है

सवालः हुकूमते पाकिस्तान ने जो ज़कात व उश्र कमेटियाँ बनाई हैं उनके पास उश्र की काफ़ी रक़म जमा है, क्या उश्र की रक़म आ़म फ़ायदे के कामों पर ख़र्च की जा सकती है? जैसे स्कूल की इमारत या चारदीवारी या गलियाँ वग़ैरह।

जवाबः ज़कात और उश्र की रक़म सिर्फ़ फ़क़ीरों और ग़रीबों को दी जा सकती है, आ़म फ़ायदे के कामों पर ख़र्च करना जायज़ नहीं।

उश्र की अदायेगी से मुताल्लिक़ विभिन्न मसाईल

सवालः क्या उश्र का ज़कात की तरह निसाब है? क्योंकि हुकूमत ने एक मिक़दार (हद और मात्रा) मुक़र्रर की हुई है, अगर फ़सल उस मिक़दार से ज़्यादा हो तो उश्र देना लाज़िमी है, वरना नहीं।

जवाबः हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रह0 के नज़दीक उश्र का निसाब नहीं बल्कि हर थोड़े व ज़्यादा में उश्र वाजिब है। हुकूमत एक ख़ास मिक़दार पर उश्र वुसूल करती है इससे कम का उश्र मालिक को ख़ुद अदा करना चाहिए।

सवालः हुकूमत को उश्र, ज़कात देना जायज़ है या नहीं? क्योंकि तसर्रुफ़ (यानी उसका सही इस्तेमाल और ख़र्च) बहुत मशकूक है।

जवाबः भरोसा न हो तो न दिया जाए लेकिन क्या ऐसा मुम्किन भी है कि हुकूमत उश्र वुसूल करे और किसान अदा न करे?

सवालः बारानी (बारिश वाली) ज़मीन की फ़सल पर उश्र दसवाँ हिस्सा है और नहरी व कुएँ वग़ैरह वाली पर बीसवाँ है। क्या बीसवाँ हिस्सा इसलिए मुक़र्रर है कि बाद वाली पर ख़र्चे बढ़ जाते हैं? अगर यह सही है तो आजकल कीड़े मार इस्प्रे और कैमिकल खाद का इज़ाफ़ी ख़र्च काश्तकार को बरदाश्त करना पड़ता है, क्या इस्प्रे वग़ैरह का ख़र्च फ़सल की आमदनी से कम करके उश्र देना होगा या कुल पैदावार पर उश्र देना होगा?

जवाबः शरीअत ने ख़र्चों निस्फ़ उश्र (यानी दसवें हिस्से के बजाये बीसवाँ हिस्सा) कर दिया है, इसलिए ख़र्चों को निकाल करके उश्र नहीं दिया जाएगा, बल्कि तमाम पैदावार का उश्र दिया जाएगा।

सवालः फ़र्ज़ करें ढाई ऐकड़ ज़मीन से 100 मन गन्दुम पैदा होती है, उस गन्दुम की कटाई का ख़र्च तक़रीबन 5 मन होगा, गन्दुम की कटाई दो मन प्रति ऐकड़ के हिसाब से करते हैं और थरेशर (गुहाई) का ख़र्च तक़रीबन 15 मन होगा, बचत आमदनी 80 मन होगी। क्या उश्र 100 मन पर देना होगा या 80 मन पर।

जवाबः उश्र सौ मन पर आएगा।

सवालः गन्दुम की फ़सल की कटाई की मज़दूरी गन्दुम में देना जायज़ है या नहीं? क्योंकि गन्दुम की फ़सल की कटाई की मज़दूरी सिर्फ़ गन्दुम की सूरत में लेते है।

जवाबः साहिबैन (इमाम मुहम्मद और इमाम अबू यूसुफ़ रह0) के नज़दीक जायज़ है और इसी पर फ़तवा है।

ज़कात के विभिन्न मसाईल

ज़कात देने वाला जिस मुल्क में हो उसी मुल्क की करन्सी का एतिबार होगा

सवालः चन्द दोस्त मिलकर अपने वतन के ज़कात के मुस्तहिक़ लोगों के लिए ज़कात की रक़म भेजना चाहते हैं, लेकिन वहाँ की करन्सी (मुद्रा) और हमारी करन्सी में फ़र्क़ है, जैसे यहाँ से 50,000 रुपये भेजेंगे तो उनको 40,000 रुपये मिलेंगे। अब यह पूछना है कि ज़कात 50,000 रुपये की अदा होगी या 40,000 रुपये की अदा होगी? क्योंकि वहाँ के और यहाँ के दाम में यही फ़र्क़ चलता है।

इसी तरह हम अपने देश में ज़कात भेजें जहाँ की करन्सी की क़ीमत यहाँ की करन्सी की क़ीमत से कम हो, यानी अगर हम यहाँ से 50,000 रुपये भेजें तो वहाँ 60,000 रुपये मिलें तो इस सूरत में ज़कात 50,000 रुपये की अदा होगी या 60,000 रुपये की? दोनों मसलों का जवाब बहुत ज़रूरी है क्योंकि दोनों देशों में हमारी बिरादरी के कुछ आदमी बसते हैं,

इसको अगर अख़बार "जंग" में प्रकाशित करा दें तो बहुतों का भला होगा, क्योंकि कई लोग इस तरह पैसे भेजते रहते हैं तो उनको भी मसले का पता चल जाएगा।

जवाबः ज़कात देने वाले ने जिस मुल्क की करन्सी से ज़कात अदा की है वहाँ की करन्सी का एतिबार होगा, उस मुल्क की करन्सी से जितने माल की ज़कात अदा की उतने माल की ज़कात शुमार होगी, दूसरे मुल्क की करन्सी चाहे कम हो या ज़्यादा। दूसरे अलफ़ाज़ में यूँ समझ लीजिए कि जो रक़म किसी मोहताज या मोहताजों (ग़रीबों) को दी गई है वह ज़कात अदा करने वाले के माल का चालीसवाँ हिस्सा होना चाहिए। जिस करन्सी में ज़कात अदा की गई हो उस करन्सी के हिसाब से चालीसवें हिस्से का एतिबार होगा।

ज़कात के लिए निकाली हुई रक़म या सूद का इस्तेमाल

सवालः एक शख़्स ने ज़कात की रक़म या सूद की रक़म मुस्तहिक़ को देने के लिए निकाली लेकिन ऐन वक़्त पर उसे कुछ रक़म की ज़रूरत पड़ गई, तो क्या वह ज़कात या सूद की रक़म से बतौर क़र्ज़ ले सकता है?

जवाबः ज़कात की रक़म तो उसकी मिल्कियत है जब तक किसी को अदा नहीं कर देता, इसलिए उसका इस्तेमाल करना सही है। सूद की रक़म का इस्तेमाल सही नहीं।

सूद की रक़म पर ज़कात

सवालः एक शख़्स का बैंक में एकाउंट है और साल के

आख़िर में अपने एकाउंट में जितना मुनाफ़ा मिलता है ठीक उतने ही का चैक काट कर निकाल लेता है, और फिर ग़रीबों में यह समझकर बाँट देता है कि सवाब मिलेगा, या ज़कात बाँट देता है, तो क्या वाक़ई सवाब मिलेगा या नहीं, इस्लामी शरीअ़त में जायज़ है या नहीं?

जवाबः सूद की रक़म सदक़े की नीयत से किसी को नहीं देनी चाहिए बल्कि सवाब की नीयत के बग़ैर किसी मोहताज (ग़रीब नादार) को दे देनी चाहिए। सदक़ा तो पाक चीज़ का दिया जाता है, सूद का नहीं। पस सूद की रक़म से ज़कात अदा नहीं की जा सकती।

सदक़ा-ए-फ़ित्र

सदक़ा-ए-फ़ित्र के मसाईल

सवालः सदक़ा-ए-फ़ित्र किस पर वाजिब है और उसके क्या मसाईल हैं?

जवाबः सदक़ा-ए-फ़ित्र के मसाईल निम्न प्रकार हैं।

(1) सदक़ा-ए-फ़ित्र हर मुसलमान पर जबकि वह निसाब के बराबर माल का मालिक हो, वाजिब है।

(2) जिस शख़्स के पास अपने इस्तेमाल और ज़रूरतों से ज़ायद इतनी चीज़ें हों कि अगर उनकी क़ीमत लगाई जाए तो साढ़े बावन तोले चाँदी की मिक़दार (मात्रा) हो जाए तो यह शख़्स साहिबे निसाब कहलाएगा और उसके ज़िम्मे सदक़ा-ए-फ़ित्र वाजिब होगा। (चाँदी की क़ीमत बाज़ार से

मालूम कर लीं जाएं)

(3) हर शख़्स जो साहिबे निसाब हो उसको अपनी तरफ़ से और अपनी नाबालिग़ औलाद की तरफ़ से सदक़ा-ए-फ़ित्र अदा करना वाजिब है, और अगर नाबालिग़ों का अपना माल हो तो उसमें से अदा किया जाए।

(4) जिन लोगों ने सफ़र या बीमारी की वजह से या वैसे ही ग़फ़लत और कोताही की वजह से रोज़े नहीं रखे, सदक़ा-ए-फ़ित्र उन पर भी वाजिब है जबकि वे खाते पीते साहिबे निसाब हों।

(5) जो बच्चा ईद की रात सुबह सादिक़ होने से पहले पैदा हो उसका सदक़ा-ए-फ़ित्र लाज़िम है और अगर सुबह सादिक़ के बाद पैदा हुआ तो लाज़िम नहीं।

(6) जो शख़्स ईद की रात सुबह सादिक़ से पहले मर गया उसका सदक़ा-ए-फ़ित्र नहीं और अगर सुबह सादिक़ के बाद मरा तो उसका सदक़ा-ए-फ़ित्र वाजिब है।

(7) ईद के दिन ईद की नमाज़ को जाने से पहले सदक़ा-ए-फ़ित्र अदा कर देना बेहतर है, लेकिन अगर पहले नहीं किया तो बाद में भी अदा करना जायज़ है, और जब तक अदा नहीं करेगा उसके ज़िम्मे वाजिबुल-अदा (देय) रहेगा।

(8) सदक़ा-ए-फ़ित्र हर शख़्स की तरफ़ से पौने दो सेर गेहूँ या उसकी क़ीमत है, और इतनी क़ीमत की और चीज़ भी दे सकता है।

(9) एक आदमी का सदक़ा-ए-फ़ित्र एक से ज़्यादा फ़क़ीरों मोहताजों को देना भी जायज़ है, और कई आदमियों का सदक़ा एक फ़क़ीर मोहताज को भी देना दुरुस्त है।

(10) जो लोग साहिबे निसाब नहीं उनको सदक़ा-ए-फ़ित्र देना दुरुस्त है।

(11) अपने हक़ीक़ी (सगे) भाई बहन, चचा फूफी को सदक़ा-ए- फ़ित्र देना जायज़ है, मियाँ बीवी एक दूसरे को सदक़ा-ए-फ़ित्र नहीं दे सकते, इसी तरह माँ बाप औलाद को और औलाद माँ बाप, दादा दादी को सदक़ा-ए-फ़ित्र नहीं दे सकती।

(12) सदक़ा-ए-फ़ित्र का किसी मोहताज फ़क़ीर को मालिक बनाना ज़रूरी है, इसलिए सदक़ा-ए-फ़ित्र की रक़म मस्जिद में लगाना या किसी और अच्छाई के काम में लगाना दुरुस्त नहीं।

सदक़ा-ए-फ़ित्र ग़ैर-मुस्लिम को देना जायज़ है, मसले की तस्हीह व तहक़ीक़

सवालः जनाब मौलाना साहिब! "आपके मसाईल और उनका हल" 21 अगस्त जुमा के अंक में आपसे एक मसले में ग़लती हुई है, क्योंकि आपके वास्ते से अ़वाम को दीनी मसाईल से जानकारी हासिल हो रही है, मैं उन मसाईल की तस्हीह (शुद्धि और संशोधन) के लिए आपको तकलीफ़ दे रहा हूँ। ताकि अ़वाम को सही ख़बर हासिल हो और आप से गुज़ारिश है कि मसाईल को तहक़ीक़ और गहरी छान-बीन के बाद तहरीर फ़रमाया करें, ज़िम्मेदारी और फ़र्ज़ पूरा करें। जिस मसले में ख़ता हुई है वह इस प्रकार हैः

"सदक़ा-ए-फ़ित्र ग़ैर-मुस्लिम को देना सही है"

मैं सबसे पहले इस मसले के लिए बहिश्ती ज़ेवर का हवाला दर्ज किए देता हूँ- "ज़कात किनको देना जायज़ है" के बयान में हिस्सा सोम बहिश्ती ज़ेवर मसला नम्बर 8 यूँ है:

"**मसला**- ज़कात का पैसा किसी काफ़िर को देना दुरुस्त नहीं है, मुसलमान ही को दे देवे, ज़कात और उश्र, सदक़ा-ए-फ़ित्र और नज़्र व कफ़्फ़ारे के सिवा और ख़ैर-ख़रात काफ़िर को भी देना दुरुस्त है"।

उन किताबों ने जो मेरे पास मौजूद हैं इसी क़ौल को मुख़्तार कहा है। दुर्रे मुख़्तार, बहारे शरीअ़त, क़ानूने शरीअ़त, उम्दतुल-फ़िक़्ा शामी।

जवाबः जनाब की तस्हीह (शुद्धि और ग़लती सुधारने) का बहुत-बहुत शुक्रिया, अल्लाह तआ़ला बहुत ही जज़ा-ए-ख़ैर अ़ता फ़रमाए। मैं आप से भी और दूसरे उलेमा से भी दरख़्वास्त करता हूँ कि इस नाकारा की तहरीर में कोई ग़लती नज़र आए तो उस पर ज़रूर आगाह फ़रमाया जाए। अब इस मसले में अपनी तहक़ीक़ अ़र्ज़ करता हूँ। जिन हज़रात को इस तहक़ीक़ से इत्तिफ़ाक़ न हो वे अपनी तहक़ीक़ पर अ़मल फ़रमा सकते हैं। फ़तावा आ़लमगीरी (1-188) में है:

"ज़िम्मी काफ़िरों को ज़कात देना सब के नज़दीक जायज़ नहीं, नफ़्ली सदक़ा देना सबके नज़दीक जायज़ है, मगर सदक़ा-ए-फ़ित्र, नज़्र और कफ़्फ़ारे में इख़्तिलाफ़ (मतभेद) है, इमाम अबू हनीफ़ा रह0 और इमाम मुहम्मद रह0 फ़रमाते हैं कि जायज़ है मगर मुसलमान ग़रीबों को देना हमें ज़्यादा महबूब (पसन्द) है। शरह तहावी में इसी तरह है।"

दुर्रे मुख़्तार शामी (2-351) में है:

"ज़कात और उश्र व ख़िराज के अलावा दूसरे सदक़ात चाहे वाजिब हों जैसे नज़्र (मन्नत), कफ़्फ़ारा, फ़ित्रा, ज़िम्मी को देना जायज़ है। इसमें इमाम अबू यूसुफ़ रह0 का इख़्तिलाफ़ (राय अलग) है, और उन्हीं के क़ौल पर फ़तवा दिया जाता है। हावी क़ुदसी"।

अ़ल्लामा शामी इस पर लिखते हैं:

"हिदाया वग़ैरह में ख़ुलासा किया है कि यह इमाम अबू यूसुफ़ की एक रिवायत है जिससे ज़ाहिर होता है कि इमाम अबू यूसुफ़ का मशहूर क़ौल इमाम अबू हनीफ़ा व इमाम मुहम्मद के मुताबिक़ है"।

"ख़ैर रमली के हाशिये में हावी से जो नक़ल किया है, वह यह है कि हम इमाम अबू यूसुफ़ के क़ौल को लेते हैं (लेकिन हिदाया वग़ैरह के कलाम से यह निकलता है कि इमाम अबू हनीफ़ा व मुहम्मद रह0 का क़ौल राजेह (वरीयता प्राप्त) है और आ़म मुतून (मसाईल की बुनियादी किताबें) इसी पर हैं।")

फ़तावा क़ाज़ी ख़ाँ (आ़लमगीरी के हाशिये पर) (1-231) में है:

"और जायज़ है कि सदक़ा-ए-फ़ित्र ज़िम्मी काफ़िरों में के ग़रीबों को दिया जाए, मगर मक्रूह है।"

इन इबारतों से निम्नलिखित नतीजे हासिल हुए।

1. इमामे आज़म अबू हनीफ़ा और इमाम मुहम्मद रह0 के नज़दीक सदक़ा-ए-फ़ित्र वग़ैरह ज़िम्मी काफ़िर को देना जायज़ है, मगर बेहतर यह है कि मुसलमान को दिया जाए। ज़िम्मी

को देना बेहतर नहीं।

2. इमाम अबू यूसुफ़ रह0 का मशहूर क़ौल भी यही है, मगर उनसे एक रिवायत यह है कि सदक़ाते वाजिबा काफ़िर को देना सही नहीं।

3. हावी क़ुदसी ने इमाम अबू यूसुफ़ रह0 की इस रिवायत को लिया है मगर हिदाया और फ़िक़्हा हनफ़ी के तमाम मुतून (बुनियादी किताबों) ने इमाम अबू हनीफ़ा व इमाम मुहम्मद रह0 ही के क़ौल को लिया है।

4. जिन हज़रात ने जायज़ न होने का फ़तवा दिया उन्होंने ग़ालिबन हावी क़ुदसी के क़ौल पर भरोसा किया है, बहिश्ती ज़ेवर के मतन (असल इबारत) में भी इसी को लिया गया है। और बन्दे ने भी जंग के किसी पिछले अंक में इसी को इख़्तियार किया था, लेकिन इमाम अबू हनीफ़ा व इमाम मुहम्मद का फ़तवा जायज़ होने का है, और हावी क़ुदसी के अ़लावा तमाम अकाबिर (बड़े उलेमा) ने इसी को इख़्तियार किया है, बहिश्ती ज़ेवर के हाशिये में भी इसी को नक़ल किया है, इसलिए इस नाकारा ने अपने पहले मसले से रुजू करना ज़रूरी समझा था।

मन्नत व सदक़ा

सदक़े की परिभाषा और क़िस्में

सवालः सदक़े की तारीफ़ (परिभाषा) क्या है और उसकी कितनी क़िस्में हैं?

जवाबः जो माल अल्लाह तआ़ला की रज़ा के लिए अल्लाह की राह में गरीबों मिस्कीनों को दिया जाता है या ख़ैर के किसी काम में ख़र्च किया जाता है उसे सदक़ा कहते हैं। सदक़े की तीन क़िस्में हैंः

1. फ़र्ज़, जैसे ज़कात।
2. वाजिब, जैसे नज़्र, सदक़ा-ए-फ़ित्र और क़ुरबानी वग़ैरह।
3. नफ़्ली सदक़ात जैसे आ़म ख़ैरात।

ख़ैरात, सदक़े और नज़्र में फ़र्क़

सवालः ख़ैरात, सदक़ा और नज़्र व नियाज़ में क्या फ़र्क़ है?

जवाबः सदक़ा व ख़ैरात तो एक ही चीज़ है, यानी जो माल अल्लाह तआ़ला की ख़ुशनूदी के लिए किसी ख़ैर के काम में ख़र्च किया जाए वह सदक़ा व ख़ैरात कहलाता है, और किसी काम के होने पर कुछ सदक़ा करने की या किसी इबादत के बजा लाने की मन्नत मानी जाए तो उसको नज़्र कहते हैं। "नज़्र" का हुक्म ज़कात का हुक्म है, उसको सिर्फ़

ग़रीब ग़ुरबा खा सकते हैं, ग़नी (मालदार) नहीं खा सकते, नियाज़ के मायने भी नज़्र ही के हैं।

सदक़े और मन्नत में फ़र्क़

सवालः सदक़े और मन्नत में क्या फ़र्क़ है?

जवाबः नज़्र और मन्नत अपने ज़िम्मे किसी चीज़ के लाज़िम करने का नाम है, जैसे कोई शख़्स मन्नत मान ले कि मेरा फ़ुलाँ काम हो जाए तो मैं इतना सदक़ा करूँगा, काम होने पर मन्नत मानी हुई चीज़ वाजिब हो जाती है। और कोई आदमी बग़ैर लाज़िम किए अल्लाह तआ़ला के रास्ते में ख़ैर-ख़ैरात करे तो उसको सदक़ा कहते हैं। गोया मन्नत भी सदक़ा ही है मगर वह वाजिब सदक़ा है, जबकि आ़म सदक़ात वाजिब नहीं होते।

नज़्र व मन्नत की तारीफ़

सवालः नज़्र और मन्नत की तारीफ़ (मायने और परिभाषा) क्या है? और उनमें अगर कोई फ़र्क़ हो तो वाज़ेह फ़रमाएँ।

जवाबः नज़्र के मायने हैं किसी शर्त पर कोई इबादत अपने ज़िम्मे ले लेना, जैसे फ़ुलाँ काम हो जाए तो मैं इतने नफ़िल पढूँगा, इतने रोज़े रखूँगा, बैतुल्लाह का हज करूँगा, या इतनी रक़म फ़क़ीरों को दूँगा वग़ैरह। इसी को मन्नत भी कहा जाता है। मन्नत और नज़्र का गोश्त न ख़ुद इस्तेमाल कर सकता है न किसी ग़नी (मालदार) को दे सकता है, बल्कि उसका गोश्त फ़क़ीरों ग़रीबों पर तक़सीम करना ज़रूरी है।

मन्नत की शर्तें

सवालः हमारे मज़हब में मन्नत मानना कैसा है और उसके अलफ़ाज़ क्या होने चाहिएँ? और किन-किन सूरतों में मन्नत माननी चाहिए?

जवाबः शरअ़न् मन्नत मानना जायज़ है, मगर मन्नत मानने की चन्द शर्तें हैं- अव्वल यह कि मन्नत अल्लाह तआ़ला के नाम की मानी जाए, अल्लाह के अ़लावा किसी और के नाम की मन्नत जायज़ नहीं, बल्कि गुनाह है। दूसरे यह कि मन्नत सिर्फ़ इबादत के काम की सही है, जो काम इबादत नहीं उसकी मन्नत भी सही नहीं। तीसरे यह कि इबादत भी ऐसी हो कि उस तरह की इबादत कभी फ़र्ज़ या वाजिब होती है, जैसे नमाज़, रोज़ा, हज क़ुरबानी वग़ैरह, ऐसी इबादत कि उसकी जिन्स कभी फ़र्ज़ या वाजिब नहीं उसकी मन्नत भी सही नहीं, चुनाँचे क़ुरआन-ख़्वानी की मन्नत मानी हो तो वह लाज़िम नहीं होती।

सिर्फ़ ख़्याल आने से मन्नत लाज़िम नहीं होती

सवालः मोहतरम! मेरी एक दोस्त है ग़ैर-शादीशुदा, उसकी फूफी की शादी को काफ़ी अ़र्सा गुज़र गया, वह अभी तक औलाद की नेमत से मेहरूम है। एक दिन मेरी दोस्त के ज़ेहन में यह ख़्याल आता है कि फूफी यह कहें कि मेरे यहाँ (फूफी के यहाँ) औलाद हो गई तो मैं बच्चों का सामान किसी को भी दे दूँगी। उसके बाद उसके ज़ेहन में यह ख़्याल आता

है कि यह मन्नत तुमने अपने लिए मानी है, लेकिन यह ख़्याल आते ही मेरी दोस्त ने ख़ुदा से तौबा कर ली है और उसका ज़ेहन इस सारी चीज़ को क़बूल नहीं करता।

मेरी दोस्त आजकल बहुत परेशान है, मेहरबानी फ़रमाकर मौलाना साहिब! आप यह फ़रमाएँ कि इस तरह सिर्फ़ ज़ेहन में ख़्याल आने से मन्नत हो जाती है कि नहीं? जबकि लोग कहते हैं कि सिर्फ़ ख़्याल आने से मन्नत नहीं होती।

जवाबः सिर्फ़ किसी बात का ख़्याल आने से मन्नत नहीं होती, बल्कि ज़बान से अदा करने के साथ होती है।

हलाल माल सदक़ा करने से बला दूर होती है, हराम माल से नहीं

सवालः उलेमा से सुना है कि सदक़ा बला को दूर करता है। सदक़ा हर मर्ज़ का इलाज है। क्या यह दुरुस्त है? किसी शख़्स को साये का दौरा पड़ता है या जादू की तकलीफ़ है तो क्या सदक़ा करने से उसकी तकलीफ़ या दौरे में फ़र्क़ पड़ेगा? किसी तकलीफ़ के लिये सदक़ा किस तरह करना चाहिए? क्या सदक़े की मन्नत माननी भी जायज़ है, जैसे ऐ ख़ुदा! अगर फ़ुलाँ तकलीफ़ इतने समय में दूर हो जाए तो मैं इतना सदक़ा करूँगा, क्या यह जायज़ है?

एक शख़्स कहता है कि इसका मतलब तो यह हुआ कि अल्लाह रिश्वत लेकर तकलीफ़ दूर करता है। अगर सदक़ा हर मर्ज़ का इलाज है, सदक़ा करने से तकलीफ़ परेशानी दूर होती है तो फिर गंजापन एक बीमारी है, क्या सदक़ा करने से सर पर बाल उग आएँगे? सदक़ा सिर्फ़ ग़रीबों का हक़ है या

मस्जिद में भी दिया जा सकता है? मेहरबानी फ़रमाकर सदक़े के बारे में उपर्युक्त सवालात का मुफ़स्सल जवाब तहरीर फ़रमा दें। सदक़े से कौनसी तकलीफ़ बीमारी दूर हो सकती है, और किस तरह करना चाहिए?

जवाबः सदक़ा बला को दूर करने का ज़रिया है, लेकिन "हर मर्ज़ का इलाज है" यह मैंने नहीं सुना है। जो मुसीबतें और तकलीफ़ें अल्लाह तआ़ला की नाराज़गी की वजह से पेश आती हैं, वे सदक़े से टल जाती हैं, क्योंकि सदक़ा अल्लाह तआ़ला के गुस्से को ठन्डा करता है। मन्नत मानना जायज़ है मगर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसको पसन्द नहीं फ़रमाया, इसलिए बजाये मन्नत मानने के नक़द सदक़ा करना चाहिए। ग़रीबों और मोहताजों की ख़िदमत भी सदक़ा है, और मस्जिद की ख़िदमत भी सदक़ा है, मगर सदक़ा पाक माल से होना चाहिए, नापाक और हराम माल में से किया हुआ सदक़ा अल्लाह तआ़ला की बारगाह में क़बूल नहीं होता।

ग़ैरुल्लाह की नियाज़ का मसला

सवालः क्या इमाम जाफ़रे सादिक़ की नियाज़ और ग्यारहवीं का खाना हराम है? क्या अल्लाह तआ़ला के अ़लावा किसी ग़ैर की नियाज़ नहीं होती?

जवाबः ग़ैरुल्लाह के नाम जो नियाज़ दी जाती है अगर उससे मक़सूद उस बुज़ुर्ग की रूह को ईसाले सवाब है यानी अल्लाह तआ़ला की रज़ा के लिए जो सदक़ा किया जाए उसका सवाब उस बुज़ुर्ग को बख़्श देना मक़सूद हो, तो यह सूरत तो जायज़ है। और अगर महज़ उस बुज़ुर्ग की रज़ा हासिल करने के लिए उसके नाम की नज़्र व नियाज़ दी जाए

ताकि वह खुश होकर हमारे काम बनाए तो यह नाजायज़ और शिर्क है।

बकरी किसी ज़िन्दा या मरे हुए के नाम करना

सवालः क्या यह सही है कि एक बकरी किसी ज़िन्दा या मरे हुए के नाम कर दें और फिर उसको ज़िबह करें तो उसका खाना जायज़ है? या ऐसे कहे कि मेरा यह फ़ुलाँ काम हो गया तो मैं यह बकरी उस वलीयुल्लाह (यानी किसी बुज़ुर्ग) के नाम पर ज़िबह करूँगा।

जवाबः बकरी किसी बुज़ुर्ग के नाम कर देने से अगर यह मुराद है कि इस सदके का सवाब उस बुज़ुर्ग को पहुँचे तो ठीक है, और उस बकरी का गोश्त हलाल है, जबकि वह अल्लाह तआ़ला के नाम पर ज़िबह की गई हो, और अगर उस बुज़ुर्ग के नाम पर चढ़ावा मक़सूद है तो यह शिर्क है और वह बकरी हराम है, हाँ मगर यह कि नज़्र मानने वाला अपने फ़ेल से तौबा करके अपनी नज़्र से बाज़ आ जाए।

ख़ातूने जन्नत की कहानी मन-गढ़त है और उसकी मन्नत नाजायज़

सवालः अगर कोई ख़ातून (औ़रत) यह मन्नत माने कि अगर मेरा फ़ुलाँ काम पूरा हो जाए तो ख़ातूने जन्नत (यानी हज़रत फ़ातिमा) की कहानी सुनूँगी। मैंने भी तीन सौ दफ़ा ख़ातूने जन्नत की कहानी सुनने की मन्नत मान रखी है, लेकिन तीन सौ दफ़ा सुनना दुश्वार हो रहा है, आप कोई हल बतलाएँ।

जवाबः ख़ातूने जन्नत की कहानी मन-गढ़त है, न उसकी मन्नत दुरुस्त है न उसका पूरा करना जायज़ है। आप इस मन्नत से तौबा करें उसके पूरा न करने की वजह से परेशान न हों।

न तो मज़ार पर सलामी की मन्नत मानना जायज़ है और न उसका पूरा करना

सवालः मेरी वालिदा (माँ) ने नीयत की थी कि मेरी शादी हो जाएगी तो वह मुझे और मेरी दुल्हन को लेकर लाल शहबाज़ क़लन्दर के मज़ार पर सलामी के लिए जाएँगी। अब शादी हो गई है लेकिन मैं औरतों के मज़ारों पर जाने का मुख़ालिफ़ हूँ। शरीअत की रू से मुझे क्या करना चाहिए?

जवाबः ऐसी मन्नत मानना सही नहीं और उसका पूरा करना भी दुरुस्त नहीं, इसलिए आप सलामी देने के लिए अपनी बीवी को मज़ार पर लेकर हरगिज़ न जाएँ।

सेहत के लिए अल्लाह से मन्नत मानना जायज़ है

सवालः अगर बीमारी से शिफ़ा के लिए मन्नत अल्लाह से मानी जाए तो क्या यह दुरुस्त व जायज़ है? क्या यह अल्लाह से शर्त करना नहीं होगा?

जवाबः सेहत के लिए मन्नत मानना जायज़ है, मगर उससे बेहतर यह है कि बग़ैर मन्नत के सदक़ा व ख़ैरात की जाए और अल्लाह तआला से सेहत की दुआ की जाए।

पराई लकड़ियों से पकी हुई चीज़ जायज़ नहीं

सवालः हमने अल्लाह के नाम पर कुछ पकाकर तक़सीम करने का इरादा किया और वह अल्लाह के हुक्म से पूरा हो गया। पकाने के दौरान लकड़ी की कमी हो गई और किसी परेशानी या किसी वजह से लकड़ी न मिल सकी, तो हमने किसी मैदान से थोड़ी सी लकड़ी उठा ली। काम पूरा हो गया, लकड़ी के मालिक को ढूँढना परेशान-कुन था, इसलिए लकड़ी के वज़न के मुताबिक़ जो रक़म बनती थी वह ख़ैरात कर दी। क्या वह चीज़ जो तक़सीम की गई हराम हो गई?

जवाबः अल्लाह के नाम पर जो चीज़ देनी हो उतनी रक़म चुपके से किसी मुस्तहिक़ को दे देनी चाहिए। पका कर खिलाना कोई ज़रूरी नहीं, और पराई लकड़ी उठाकर अल्लाह के नाम की चीज़ पकाना जायज़ नहीं, जिसकी लकड़ियाँ थीं उसको तलाश करके उन लकड़ियों की क़ीमत अदा की जाए या उससे माफ़ी माँगी जाए।

हराम माल से सदक़ा नाजायज़ और वबाल का सबब है

सवालः बहुत से लोगों को देखा है कि वे रिश्वत, सूद, नाजायज़ तिजारत, हराम कारोबार वग़ैरह से रुपया जमा करते हैं और फिर उससे सदक़ा व ख़ैरात करते हैं और हज भी करते हैं। पूछना यह है कि हराम रुपये तो कमाना गुनाह है, फिर उस रुपये से सदक़ा वग़ैरह जायज़ है या नहीं?

जवाबः माले हराम से सदक़ा क़बूल नहीं होता, बल्कि

उल्टा वबाल का सबब है। हदीस शरीफ़ में है कि "अल्लाह तआला पाक हैं और पाक चीज़ ही को कुबूल करते हैं"। हराम और नाजायज़ माल का सदक़ा करने की मिसाल ऐसी है कि कोई शख़्स गन्दगी का टोकरा किसी बादशाह को हदिये के तौर पर पेश करे, ज़ाहिर है कि उससे बादशाह खुश नहीं होगा बल्कि उल्टा नाराज़ होगा।

एक हाथ से सदक़ा दिया जाए तो दूसरे हाथ को पता न चले, का मतलब

सवालः सदक़े के बारे में उलेमा-ए-किराम से सुना है कि इस तरह दिया जाए कि दूसरे हाथ को इल्म न हो, दूसरे हाथ से मुराद दूसरा आदमी है। क्या अगर एक आदमी सदक़ा देना चाहता है और वह खुद बाहर के मुल्क में कारोबार कर रहा है, जिस आदमी को सदक़ा देना चाहता है उसका कोई पता नहीं है, (बेवा औरत है) वह किस तरह उसको देगा। अगर सदक़े की रक़म अपनी बीवी के ज़रिये देना चाहे तो इस सदक़े में कोई हर्ज तो नहीं? जबकि बीवी शौहर के हुक़ूक़ बराबर हैं, इस तरह सदक़ा हो जाएगा या नहीं? इसका कोई विकल्प बताएँ।

जवाबः जो सूरत आपने लिखी है उसके मुताबिक़ बीवी के ज़रिये सदक़ा देने में कोई हर्ज नहीं। "एक हाथ से दिया जाए तो दूसरे हाथ को पता न चले" से मक़सूद यह है कि दिखावे, रियाकारी और नाम के लिये नहीं होना चाहिए और घर के भरोसेमन्द अफ़राद के ज़रिये सदक़ा देना रियाकारी नहीं।

सदके में बहुत-सी शर्तें और पाबन्दियाँ लगाना दुरुस्त नहीं

सवालः क्या सदके में काला मुर्ग़ा या किसी रंग व नस्ल का मुर्ग़ा देना जायज़ है, इसकी शरई हैसियत क्या है?

जवाबः जो चीज़ रज़ा-ए-इलाही के लिए अल्लाह के रास्ते में दी जाए वह सदक़ा कहलाती है। नफ़्ली सदक़ा कम या ज़्यादा अपनी तौफ़ीक़ के मुताबिक़ आदमी कर सकता है। सदके से बलाएँ दूर हो जाती हैं, सदके में बकरे या मुर्ग़े का ज़िबह करना कोई शर्त नहीं, और न किसी रंग व नस्ल की क़ैद (पाबन्दी) है। बाज़ लोग जो इस क़िस्म की शर्तें और पाबन्दियाँ लगाते हैं वे अक्सर बद्-दीन होते हैं।

मन्नत को पूरा करना ज़रूरी है और उसके मुस्तहिक़ ग़रीब लोग और मदरसे के तालिब-इल्म हैं

सवालः मेरी वालिदा साहिबा ने मेरी नौकरी के सिलसिले में मन्नत मानी थी कि अगर मेरे बेटे को मतलूबा जगह नौकरी मिल गई तो मैं अल्लाह के नाम पर क़ुरबानी करूँगी। अल्लाह का शुक्र है नौकरी मिल गई। खुदा का शुक्र है, लेकिन काफ़ी समय गुज़र गया अभी तक मन्नत पूरी नहीं की, उसमें सुस्ती और देर ज़रूर हुई है लेकिन उसमें हमारी नीयत में कोई फ़ुतूर नहीं, सिर्फ़ यह मतलूब है कि उसके अदा करने

का तरीक़ा क्या हो जो सही और ऐन इस्लामी हो, इसमें मतभेद यह है कि जिस जानवर की क़ुरबानी की जाए उसका गोश्त रिश्तेदारों, घर के अफ़राद के लिए नाजायज़ है या जायज़? या पूरा का पूरा ग़रीब व मिस्कीन और किसी दारुल-उलूम मदरसे को दे देना चाहिए?

जवाबः आपकी वालिदा के ज़िम्मे क़ुरबानी के दिनों में क़ुरबानी वाजिब है और उस गोश्त का ग़रीबों और फ़क़ीरों पर तक़सीम करना लाज़िम है, मन्नत की चीज़ ग़नी और मालदार लोग नहीं खा सकते, जिस तरह कि ज़कात और सदक़ा-ए-फ़ित्र मालदारों के लिए हलाल नहीं।

काम होने के लिए जिस चीज़ की मन्नत मानी थी वह याद नहीं रही तो क्या करे

सवालः मैंने मन्नत मानी थी कि अगर मेरी मुराद पूरी हो गई तो मैं रोज़े रखूँगा और सदक़ा दूँगा, वग़ैरह। इस सिलसिले में पूछना यह है कि मुझे सही तरह याद नहीं है कि मैंने कितने रोज़ों की मन्नत मानी थी, और सदक़े में क्या देना है। क्या मैं दोबारा किसी चीज़ की नीयत कर सकता हूँ (यानी सदक़ा वग़ैरह या नफ़िल नमाज़ या रोज़े वग़ैरह की तादाद या पैसों की मिक़दार दोबारा मुतैयन कर सकता हूँ कि नहीं)। यह वाज़ेह रहे कि अभी मेरी मुराद पूरी नहीं हुई, मैं चाहता हूँ कि जो भी मन्नत मानूँ उसे पूरा करूँ, इसलिए लिखकर अपने पास रख लूँ ताकि याद रह सके, या फिर मुझे पहले वाली मन्नत पूरी करनी होगी?

जवाबः जिस काम के लिए आपने मन्नत मानी थी अगर वह पूरा नहीं हुआ तो मन्नत लाज़िम नहीं होती, अगर आपने यूँ कहा था कि इतने रोज़े रखूँगा या इतना सदक़ा दूँगा तब तो काम पूरा हो जाने की सूरत में आपको उतने ही रोज़े रखने होंगे और सदक़ा देना होगा, और अगर याद नहीं तो सोचने और ध्यान करने के बाद जो मिक़दार (मात्रा और तादाद) ज़ेहन में आए उसको पूरा करना होगा, और अगर यूँ कहा था कि कुछ रोज़े रखूँगा या कुछ सदक़ा दूँगा तो अब उसका निर्धारण कर सकते हैं।

अगर सदक़े की अमानत गुम हो गई तो उसका अदा करना लाज़िम नहीं

सवालः कुछ दिन पहले मेरी बड़ी बहन (ग़ैर-शादीशुदा) ने मुझे चार सौ रुपये बकरा सदक़ा करने के लिए दिए और साथ ही यह नसीहत की कि ये रुपये तुम्हारे रुपयों में शामिल न हों। मैंने वे रुपये अलग रखने की ग़र्ज़ से मोड़कर जेब में रख लिए कि सुबह बकरा सदक़ा करवा दूँगा। लेकिन इत्तिफ़ाक़ से ये रुपये उसी रात को मेरी जेब से कहीं निकल गए। मेरे अन्दाज़े से ये रुपये मोटर साईकल पर जाते हुए जेब में अलग होने की वजह से कहीं उड़ गए हैं, इस तरह मेरी बहन ने जो रक़म सदक़े के लिए निकाली थी वह उस मक़सद के लिए इस्तेमाल न हुई। आपसे यह पूछना है कि ऐसी सूरत में सदक़ा हो गया या नहीं? जबकि नीयत मेरी बिल्कुल साफ़ थी और हदीस में भी है कि अल्लाह तआ़ला तुम्हारी नीयतों को देखता

है। अगर मैं चाहूँ तो अपनी जेब ख़र्च से पैसे बचाकर उतनी ही रक़म दोबारा जमा करके सदक़ा कर सकता हूँ। बराहे मेहरबानी मेरी इस सिलसिले में रहनुमाई फ़रमाएँ क्योंकि जिस दिन से रुपये खोए हैं मैं शदीद ज़ेहनी उलझन का शिकार हूँ।

जवाबः आपके ज़िम्मे उन पैसों का अदा करना लाज़िम नहीं, अगर आपकी बहन ने नफ़्ली सदक़े के लिए दिए थे तो उनके ज़िम्मे कुछ लाज़िम नहीं, और अगर नज़्र (मन्नत) मानी थी तो उनके ज़िम्मे उस नज़्र का पूरा करना लाज़िम है।

शीरीनी की मन्नत मानी हो तो उतनी रक़म भी ख़र्च कर सकते हैं

सवालः मैंने एक मुश्किल वक़्त ख़ुदा के हुज़ूर कामयाबी के लिए 11 रुपये की शीरीनी मानी थी, अब मैं वह रक़म किसी मस्जिद की तामीर में ख़र्च करना चाहता हूँ। आया दुरुस्त है या मुझे मिठाई वग़ैरह लेकर तक़सीम करनी पड़ेगी?

जवाबः किसी मोहताज ग़रीब को उतनी रक़म दे दी जाए।

मय्यित के सवाब के लिए किया हुआ सदक़ा मस्जिद में इस्तेमाल करना

सवालः हमारे इलाक़े में अगर किसी की मौत हो जाए तो उसके पीछे जो सदक़ा दिया जाता है वह मस्जिद में इस्तेमाल करते हैं। क्या ऐसा करना जायज़ है या नहीं? हम उस सदक़े को मस्जिद की ज़रूरतों में ख़र्च कर सकते हैं या नहीं?

जवाबः अगर मय्यित ने मस्जिद में ख़र्च करने की वसीयत की हो या उसके वारिस (बशर्ते कि वे आ़क़िल बालिग़ हों) ख़ुद मय्यित की तरफ़ से मस्जिद में ख़र्च करते हैं तो सही है, और यह सदक़ा-ए-जारिया में शुमार होगा।

मन्नत पूरी करना काम होने के बाद ज़रूरी है, न कि पहले

सवालः अगर कोई शख़्स मन्नत माने कि मेरा फ़ुलाँ काम हो तो मैं रोज़ा रखूँगा या नफ़िल वग़ैरह पढ़ूँगा, तो वह शख़्स यह काम मन्नत पूरी होने से पहले करे या बाद में करे?

जवाबः अल्लाह तआ़ला के नाम की मन्नत मानना जायज़ है और काम होने के बाद मन्नत का पूरा करना लाज़िम होता है, पहले नहीं। और काम के पूरा होने से पहले उस मन्नत का अदा करना भी सही नहीं, पस अगर मन्नत का रोज़ा पहले रख लिया और काम बाद में पूरा हुआ तो काम होने के बाद रोज़ा दोबारा रखना लाज़िम होगा।

मन्नत का एक ही रोज़ा रखना होगा या दो

सवालः किसी आदमी ने मन्नत मानी थी कि मेरा फ़ुलाँ काम पूरा हो गया तो मैं हर साल मुहर्रम के महीने में या किसी और महीने में एक रोज़ा रखूँगा, उसकी मन्नत पूरी हो गई। रोज़ा तो वह हर साल अपने मुक़र्ररा महीने में रखता है, मगर बाज़ लोगों का कहना है कि मन्नत का रोज़ा अकेला एक नहीं रखा जाता, दो लगातार रखे। बराहे मेहरबानी इस सिलसिले में शरीअ़त के हिसाब से रोशनी डालें ताकि शक दूर

हो। अगर दो रोज़े लगातार रखने थे तो पिछले जितने सालों के रोज़े रखे हों उनका कफ़्फ़ारा किस तरह अदा किया जाए?

जवाबः अगर एक ही रोज़े की मन्नत मानी थी तो एक रोज़ा वाजिब है, दूसरा मुस्तहब, उसकी क़ज़ा रखने की ज़रूरत नहीं।

सदक़े का गोश्त घर में इस्तेमाल करना नाजायज़ है

सवालः एक आदमी सदक़े में बकरा ज़िबह करता है और वह गोश्त आस-पास पड़ोसियों में बाँटता है, आया वह गोश्त घर में भी खिला सकता है या कि नहीं? आप शरई दलील पेश करें कि सदक़े के बकरे का गोश्त घर में इस्तेमाल हो सकता है या नहीं?

जवाबः बकरा ज़िबह करने से सदक़ा नहीं होता, बल्कि फ़क़ीरों व मसाकीन को देने से सदक़ा होता है, इसलिए जितना गोश्त मोहताजों ग़रीबों को तक़सीम कर दिया उतना सदक़ा हो गया और जो घर में खा लिया वह नहीं हुआ, अलबत्ता अगर नज़्र (मन्नत) मानी हुई थी तो उस पूरे बकरे का ग़रीबों मिस्कीनों पर सदक़ा करना वाजिब है। न मालदार पड़ोसियों को देना जायज़ है, और न घर में खाना जायज़ है।

जो गोश्त फ़क़ीरों और मिस्कीनों में तक़सीम कर दिया वह सदक़ा है, जो घर में रखा वह सदक़ा नहीं

सवालः कुछ देहाती इलाक़ों में रस्मों वाले रिवाज जारी हैं,

जिनमें पढ़े लिखे लोग भी शामिल हैं। हमारे गाँव से जो लोग विदेशों में मज़दूरी करते हैं या नौकरी से वापसी पर छुट्टी के दौरान आते हैं वे एक दो या ज़ायद गाय या बैल सदक़ा करते हैं, मगर वे कहते हैं कि मैंने "गश्ती" मानी थी जो कर रहा हूँ (दाद सदक़ा)।

उसकी तक़सीम इस तरह होती है कि गोश्त को तीन हिस्सों में बाँट दिया जाता है, जिसके लिए कोई पैमाना या तौल नहीं होती, अन्दाज़ा होता है। एक हिस्सा घर के लिए रख दिया जाता है बाक़ी दो को इकट्ठा मिलाकर छोटा-छोटा काट लेते हैं और रिश्तेदारी के हर घर में प्रति आदमी आधा किलो ग्राम के हिसाब से देते हैं। ज़्यादा क़रीबी रिश्तेदार हों तो बग़ैर हिसाब के भी दिया जाता है। उस वक़्त जो ग़ैर लोग मौजूद होते हैं उन्हें सिर्फ़ आधा किलो ग्राम के हिसाब से दिया जाता है, बाक़ी गोश्त घर के लिए रख दिया जाता है। जबकि गाय या बैल का चमड़ा, सर और अन्दरूनी गोश्त जैसे दिल, कलेजा, गुर्दे, फेफड़े और थोड़ा बहुत दूसरा अच्छा गोश्त पहले ही अपने घर के लिए रख दिया जाता है।

हमें इख़्तिलाफ़ (मतभेद) है, अगर वह सदक़ा है तो उसको गश्ती का नाम क्यों दिया जाता है? फिर अगर सदक़ा तसव्वुर करके दिया जाता है तो क्या उसका यह तरीक़ा दुरुस्त है? खुदा उसे मन्ज़ूर कर लेता है या नहीं?

जवाबः "गश्ती" का मतलब तो मैं समझा नहीं, अगर यह नज़्र (मन्नत) होती है तो पूरे का सदक़ा करना ज़रूरी है, खुद खाना या अमीरों को देना जायज़ नहीं। और अगर वैसे ही सदक़ा होता है तो जितना गोश्त फ़क़ीरों ग़रीबों को

तक़सीम कर दिया वह सदक़ा है और जो घर में रख लिया वह सदक़ा नहीं।

मन्नत का गोश्त सिर्फ़ ग़रीब खा सकते हैं

सवालः मेरी बहन ने यह मन्नत मानी थी कि अगर मेरा काम हो गया तो मैं अल्लाह के नाम पर बकरा ज़िबह करूँगी। लिहाज़ा अब उनका काम हो गया और वह अपनी मन्नत पूरी करना चाहती हैं, और अल्लाह के नाम का बकरा करना चाहती हैं। क्या उस बकरे का गोश्त अ़ज़ीज़ व रिश्तेदार और घर वाले इस्तेमाल कर सकते हैं या नहीं? बराहे करम रहबरी फ़रमाएँ।

जवाबः मन्नत की चीज़ को सिर्फ़ ग़रीब-गुरबा खा सकते हैं, अ़ज़ीज़ व रिश्तेदार और खाते पीते लोगों को उसका खाना जायज़ नहीं, वरना मन्नत पूरी नहीं होगी।

सवालः आपने जुमा के अंक में एक सवाल के जवाब में इरशाद फ़रमाया था कि मन्नत का गोश्त पूरा का पूरा अल्लाह की राह में तक़सीम करना चाहिए। यह ख़ुद खाना या रिश्तेदारों को खिलाना नाजायज़ है। क्या दूसरी चीज़ों के मुताल्लिक़ भी यही हुक्म है। जैसे अगर कोई शख़्स बकरे के अ़लावा किसी चीज़ की मन्नत मानता है तो क्या वह भी सारी की सारी अल्लाह की राह में तक़सीम करनी चाहिए?

जवाबः जी हाँ! नज़्र (मन्नत) की तमाम चीज़ों का यही हुक्म है कि उनको ग़रीब-गुरबा पर तक़सीम कर दिया जाए, ग़नी (मालदार) लोगों का उसको खाना जायज़ नहीं और नज़्र मानने वाला और उसके घर वाले खुद भी उसको नहीं खा

सकते।

मन्नत की नफ़्लों का पूरा करना वाजिब है

सवालः मेरी वालिदा सख़्त बीमार थीं, मैंने मन्नत मानी थी कि अगर वालिदा का आप्रेशन ठीक ठाक हो गया तो सौ नफ़िल पढ़ूँगा। मगर उसके बाद मैंने सिर्फ़ 48 नफ़िल पढ़े और बाक़ी नहीं पढ़े। बताईये अब क्या करूँ?

जवाबः अगर आपकी वालिदा का आप्रेशन ठीक हो गया था तो सौ नफ़िल आपके ज़िम्मे वाजिब हो गए। अपनी मन्नत को पूरा करना वाजिब है, इसलिए बाक़ी भी पढ़ लीजिए।

मन्नत के नफ़िल जितने याद हों उतने ही पढ़े जाएँ

सवालः अगर किसी मुश्किल के लिए नवाफ़िल माने हों और इनसान यह भूल जाए कि मालूम नहीं कितने नफ़िल माने थे, और किस मक़सद के लिए माने गए थे। अगर अब पढ़ने हों तो उनकी नीयत कैसे की जाएगी और तादाद कैसे मालूम हो? क्या हम उन नवाफ़िल के बजाये कोई सदक़ा वग़ैरह कर सकते हैं?

जवाबः उतने नवाफ़िल ही पढ़े जाएँ। ज़रा याददाश्त पर ज़ोर डाल कर याद किया जाए जितने नफ़्लों का ख़्याल ग़ालिब हो उतने पढ़ लिए जाएँ। नफ़िल ही पढ़ना वाजिब है, उनकी जगह सदक़ा देने से वह मन्नत पूरी नहीं होगी।

क़ुरआन मजीद ख़त्म कराने की मन्नत लाज़िम नहीं होती

सवालः जब हम किसी काम के पूरा होने के लिए मन्नत

मानते हैं कि फ़ुलाँ काम पूरा होने पर हम क़ुरआन शरीफ़ ख़त्म करवाएँगे, उसके लिए मौहल्ले वालों को बुलाकर हाफ़िज़ों से क़ुरआन शरीफ़ ख़त्म करवाया जाता है। मैं आपसे यह पूछना चाहता हूँ कि क्या अकेला आदमी क़ुरआन शरीफ़ ख़त्म कर सकता है? और कितने दिनों के अन्दर क़ुरआन शरीफ़ ख़त्म करना चाहिए?

जवाबः मन्नत के लाज़िम होने की उलेमा हज़रात ने अच्छी-ख़ासी शर्तें लिखी हैं, अगर वे शर्तें न पाई जाएँ तो मन्नत लाज़िम नहीं होती। उन शर्तों के मुताबिक़ अगर किसी ने यह मन्नत मानी कि मेरा फ़ुलाँ काम हो जाए तो मैं क़ुरआन शरीफ़ ख़त्म कराऊँगा तो इससे मन्नत भी लाज़िम नहीं होती और इसका पूरा करना वाजिब नहीं।

ग्यारहवीं, बारहवीं को नज़्र नियाज़ करना

सवालः क्या ग्यारहवीं और बारहवीं शरीफ़ पर रोशनी करना, इन दिनों फ़ातिहा करना, या नज़्र नियाज़ करना सवाब और ख़ैर व बरकत का सबब है? अगर न करे तो गुनाह तो नहीं है?

जवाबः मुख़्तसर यह है कि शरीअ़त ने सदक़ा ख़ैरात और ईसाले सवाब की तरग़ीब दी (यानी शौक़ दिलाया) है, मगर ये तरीक़े लोगों के ख़ुद बनाये हुए हैं। इसलिए इन चीज़ों का करना जायज़ नहीं, और नाजायज़ चीज़ की नज़्र (मन्नत) मानना भी गुनाह है, और उस नज़्र को पूरा करना भी गुनाह है।

ख़ैरात फ़क़ीर के बजाये कुत्ते को डालना जायज़ नहीं

सवालः मैं रोज़ाना शाम को अल्लाह के नाम का खाना एक रोटी या एक प्लेट चावल कुत्ते को डलवा देती हूँ, फ़क़ीर को नहीं देती, क्योंकि आजकल के फ़क़ीर तो बनावटी होते हैं। क्या मैं खाना कुत्ते को डालकर ठीक करती हूँ?

जवाबः जो फ़र्क़ इनसान और कुत्ते में है वही इनसान और कुत्ते को दी गई "ख़ैरात" में है, और आपका यह ख़्याल कि आजकल फ़क़ीर बनावटी होते हैं, बिल्कुल ग़लत है। अल्लाह तआला के बहुत से बन्दे ज़रूरत-मन्द और मोहताज हैं मगर किसी के सामने अपनी हाजत-मन्दी (ग़रीबी लाचारी) का इज़हार नहीं करते। ऐसे लोगों को सदक़ा देना चाहिए। दीनी मदरसों के तलबा को देना चाहिए। इसी तरह "अल्लाह के रास्ते" की बहुत सी सूरतें हैं, मगर आपके सदक़े का मुस्तहिक़ सिर्फ़ कुत्ता ही रह गया है।

नफ़्ली सदक़ात

सदक़ा और ख़ैरात की परिभाषा

सवालः सदक़ा और ख़ैरात एक ही चीज़ के दो नाम हैं या इनमें कुछ फ़र्क़ है?

जवाबः उर्दू मुहावरे में ये दोनों लफ़्ज़ एक ही मायने में

इस्तेमाल होते हैं। क़ुरआन मजीद में सदक़े का लफ़्ज़ ज़कात पर भी बोला गया है, और ख़ैरात तमाम नेक कामों को कहा गया है।

सदक़े का तरीक़ा

सवालः (1) सदक़े के मायने क्या हैं?

(2) बाज़ लोग अपनी जान और माल का सदक़ा देते हैं, उसका क्या मक़सद है?

(3) क्या सदक़ा कोई ख़ास क़िस्म की ख़ैरात है जो कि दी जाती है?

(4) सदक़े में क्या देना चाहिए और किन लोगों को दिया जा सकता है?

(5) क्या सैयद को सदक़ा देना जायज़ नहीं? अगर हमें उनकी माली ख़िदमत करनी मक़सूद हो तो क्या नीयत होनी चाहिए?

(6) बहुत से लोग थोड़ा सा गोश्त मंगाकर चीलों को लुटा देते हैं और कहते हैं कि यह जान का सदक़ा दिया है, क्या यह तरीक़ा ठीक है? अगर नक़द रक़म ग़रीबों को दी जाए तो यह अ़मल कैसा है या वह गोश्त ग़रीबों में तक़सीम कर दिया जाए?

(7) अक्सर यह दखा गया है कि बहुत से लोग काली मुर्ग़ी या काला बकरा ही सिर्फ़ सदक़े के तौर पर देते हैं, क्या काली चीज़ देना ज़रूरी है?

जवाबः सदक़े के मायने हैं अल्लाह तआ़ला की रज़ा व ख़ुशनूदी के लिए ख़ैर के कामों में माल ख़र्च करना। सदक़े

की क़ुरआन करीम और हदीस शरीफ़ में बड़ी फ़ज़ीलत और तरग़ीब आई (यानी इस तरफ़ तवज्जोह और शौक़ दिलाया गया) है। मुसीबतों और तकलीफ़ों के दूर करने में सदक़ा बहुत असरदार चीज़ है।

अल्लाह तआ़ला के रास्ते में जो माल भी ख़र्च किया जाए वह सदक़ा है, वह किसी मोहताज ग़रीब को नक़द रुपये पैसे दे दे, या खाना खिला दे, या कपड़े दे दे, काला बकरा या काली मुर्ग़ी की कोई खुसूसियत नहीं, न सदक़े के लिए बकरा या मुर्ग़ी ज़िबह करना ही कोई शर्त है, बल्कि अगर उनकी नक़द क़ीमत किसी मोहताज ग़रीब को दे दे तो उसका भी उतना ही सवाब है।

चीलों को गोश्त डालना और उसको जान का सदक़ा समझना भी फ़ुज़ूल बात है। हाँ कोई जानवर भूखा हो तो उसको खिलाना पिलाना बिला-शुब्हा अज्र व सवाब का सबब है, लेकिन ज़रूरत-मन्द इनसान को नज़र-अन्दाज़ करके चीलों को गोश्त डालना फ़ुज़ूल की हरकत है।

सदक़ा ग़रीबों मोहताजों को दिया जाता है, सैयद को सदक़ा नहीं देना चाहिए बल्कि हदिये और तोहफ़े की नीयत से उनकी मदद करनी चाहिए। लेकिन उनको नफ़्ली सदक़ा देना जायज़ है, ज़कात और सदक़ा-ए-फ़ित्र नहीं दे सकते। इसी तरह उलेमा और सुलहा (नेक लोगों) को भी सदक़े की नीयत से नहीं बल्कि हदिये की नीयत से देना चाहिए। सदक़े की एक क़िस्म सदक़ा-ए-जारिया है जो आदमी के मरने के बाद भी जारी रहता है, जैसे किसी जगह पानी कि कमी थी वहाँ कुआँ खुदवा दिया, मुसाफ़िरें के लिए मुसाफ़िर-ख़ाना बनवा

दिया, कोई मस्जिद बनवा दी, या मस्जिद में हिस्सा डाल दिया, या कोई दीनी मदरसा बना दिया, या किसी दीनी मदरसे में पढ़ने वालों की ख़ुराक पोशाक और किताबों वग़ैरह का इन्तिज़ाम कर दिया, या किसी मदरसे के बच्चों को क़ुरआन मजीद के नुस्ख़े ख़रीद कर दे दिए, या उलेमा को उनकी ज़रूरत की दीनी किताबें लेकर दे दीं, वग़ैरह। जब तक उन चीज़ों को फ़ैज़ जारी रहेगा उस शख़्स को मरने के बाद भी उसका सवाब पहुँचता रहेगा।

सदक़ा कब लाज़िम होता है

सवालः सदक़ा किन वक़्तों में लाज़िमी दिया जाता है, और वे चीज़ें जिस पर सदक़ा दिया जाता है उसका सही मस्रफ़ (ख़र्च करने का स्थान) क्या होना चाहिए।

जवाबः ज़कात, उश्र, सदक़ा-ए-फ़ित्र, क़ुरबानी, नज़्र, कफ़्फ़ारा ये तो फ़र्ज़ या वाजिब हैं, इनके अ़लावा कोई सदक़ा लाज़िम नहीं। हाँ कोई शख़्स बहुत ही ज़रूरत-मन्द हो और आपके पास गुन्जाईश हो तो उसकी मदद करना लाज़िम है। आ़म तौर पर नफ़्ली सदक़ा मुसीबतों और मुश्किलों के दूर करने लिए दिया जाता है, क्योंकि हदीस में है कि सदक़ा मुसीबत को टालता है।

ख़ैरात का खाना खिलाने का सही तरीक़ा

सवालः हमारे मौहल्ले में मस्जिद है, उसमें मौहल्ले के लोग हर जुमेरात को शाम के वक़्त खाना लाते हैं, ख़ैरात की नीयत से नमाज़ी एक दो लुक़्मा डालकर उठता है। ऐसे ही

एक-एक करके काफ़ी नमाज़ी एक दो लुक़्मा डालकर चलते हैं, कोई भी पेट भरकर नहीं खा सकता, क्योंकि वह इतना होता नहीं कि सब नमाज़ी पेट भरकर खा लें। क्या बेहतर यह नहीं कि वह एक जगह घर पर 5 आदमी बुलाकर पेट भरकर खिला दे?

जवाबः इससे भी बेहतर यह है कि मोहल्ले में कोई तंगदस्त हो तो उसके घर खाना भेज दिया जाए या उतनी रक़म नक़द उसको दे दी जाए। बाज़ लोग खाना खिलाने को ही सदक़ा समझते हैं। अगर ज़रूरत-मन्दों को नक़द दिया जाए या ग़ल्ला दे दिया जाए उसको सदक़ा ही नहीं समझते।

इसी तरह बाज़ लोग जुमेरात ही को खाना मस्जिद में भेजना ज़रूरी समझते हैं, हालाँकि सदक़े के लिए न जुमेरात की शर्त है और न मस्जिद में भेजने की। बाज़ लोग ईसाले सवाब के लिए खाना खिलाते हैं और यह समझते हैं कि जब तक खाने पर फ़ातिहा न दिलाई जाए ईसाले सवाब ही नहीं होता, यह भी ग़लत है।

आपने इख़्लास के साथ जो कुछ भी ख़ुदा के रास्ते में दे दिया वह क़बूल हो जाता है, और अगर आप उसका सवाब किसी अज़ीज़ या बुज़ुर्ग को पहुँचाना चाहते हैं तो ईसाले सवाब की नीयत से उसको सवाब पहुँच जाता है।

चोरी के माल की वापसी या उसके बराबर सदक़ा

सवालः किसी शख़्स ने किसी चीज़ की चोरी की और चोरी करने के बाद उसको यह ख़्याल आया कि ऐसा करना नहीं चाहिये था, लेकिन जिस जगह से वह चीज़ नाजायज़ तौर

पर हासिल की गई थी वहाँ उसका पहुँचाना भी मुम्किन न हो, तो क्या उसकी क़ीमत के बराबर रक़म ख़ैरात कर देने के बाद वह माल तसर्रुफ़ (इस्तेमाल) में लाया जा सकता है?

जवाबः अगर उस शख़्स का पता मालूम है तो वह चीज़ या उसकी क़ीमत उसको पहुँचाना लाज़िम है। रक़म भेजने में तो कोई इश्काल नहीं। बहरहाल अगर उस शख़्स का पता निशान मालूम हो तो उसकी तरफ़ से क़ीमत सदक़ा कर देना काफ़ी नहीं, बल्कि उसको पहुँचाना ज़रूरी है। और अगर वह शख़्स मर गया हो तो उसके वारिस अगर मालूम हों तो हर वारिस तक उसका हिस्सा पहुँचाना लाज़िम है, अगर उसका पता निशान मालूम न हो तो उसकी तरफ़ से उस चीज़ को सदक़ा कर दिया जाए।

ऐसी चीज़ का सदक़ा जिसका मालिक लापता हो

सवालः कुछ दिन पहले की बात है कि सख़्त बारिश हो रही थी, ऐसे में एक बकरी भागकर हमारे घर आ गई और हमारी बकरी के साथ बैठ गई। जब बारिश रुकी तो हमने उसे बाहर निकाल दिया ताकि जहाँ से आई थी वहाँ चली जाए। लेकिन वह बार-बार हमारी बकरी के साथ आकर बैठ रही थी। आख़िरकार हमने मजबूर होकर उसे बाहर निकाल कर दरवाज़ा बन्द कर दिया। ऐसे में हमारी गली का हर शख़्स यही चाह रहा था कि बकरी मुझे मिल जाए। उनका इसरार यही था कि बकरी उसे दे दी जाए। लेकिन हमने न दी, बल्कि उसे लेकर इलाक़े के दूर-दराज़ मक़ामात तक गए ताकि मालिक का पता लगाया जा सके, लेकिन पता न चल सका।

आख़िरकार बकरी हमने रख ली ताकि अगर मालिक आ जाए तो उसे दे दी जाए लेकिन दो महीने होने के बावजूद मालिक का पता न चल सका, न वह ख़ुद आया। अब उस बकरी को हम बेचना चाहते हैं और बेचकर रुपये को उसके मालिक के नाम से ख़ैरात या किसी दीनी इदारे में दे देना चाहते हैं। पूछना यह है कि हमारा यह अ़मल सही है या ग़लत? अगर ग़लत है तो हम क्या करें?

जवाबः आपका अ़मल सही है, यही करना चाहिएं। लेकिन साथ ही यह नीयत भी हो कि अगर बाद में उसका मालिक मिल गया और उसने बकरी की रक़म का मुतालबा किया तो हम रक़म उसे वापस कर देंगे, और यह सदक़ा ख़ुद हमारी तरफ़ से शुमार होगा।

وآخر دعوانا أن الحمد لله رب العالمين○